बीनती

बार बार करूं बीनती, राधास्वामी आगे।
दया करो करतार मेरे, चित चरनन लागे।।
जन्म जन्म रही भूल में, नहीं पाया भेदा।
काल करम के जाल में, रही भोगत खेदा।।
जगत जीव भरमत फिरें, निज चारों खानी।
ज्ञानी जोगी पिल रहे, सब मन की घानी।।
भाग जगा मेरा आदि का, मिले सतगुरू आई।
राधास्वामी धाम का, मोहिं भेद जनाई।।
ऊँचे से ऊँचा देश है, वह अधर ठिकानी।
बिना संत पावे नहीं, सुर्त शब्द निशानी।।
राधास्वामी नाम की, मोहिं महिमा सुनाई।
विरह अनुराग जगाय के, घर पहुंचूं भाई।।
साध संग कर सार रस, मैंने पिया अघाई।
प्रेम लगा गुरू चरन में, मन शान्ति न आई।।
तड़प उठे बेकल रहूं, कस पिया घर जाई।
दरशन रस नित नित लहूं, गहे मन थिरताई।।
सुरत चढ़े आकाश में, करे शब्द बिलासा।
धाम धाम निखत चले, पावे निज घर बासा।।
यह आसा मेरे मन बसे, रहे चित्त उदासा।
विनय सुनो किरपा करो, दीजे चरन निवासा।।
तुम बिन कोई समरथ नहीं, जासे मांगू दाना।
प्रकट धार वर्षा करो, खोलो अमृत खाना।।
दीन दयाल दया करो, मेरे समरथ स्वामी।
शुकर करूं गावत रहूं नित राधास्वामी।।

Visit us on:
www.akhandmanavtadham.in

परम संत मानव दयाल जी महाराज
(5 सितम्बर 1921 – 23 फरवरी 2001)

सत्संग परम संत मानव दयाल जी महाराज
मानवता मंदिर होशियारपुर
दिनांक 12 जून 1997

तेरी लीला कौन समझे, तू तो अपरम्पार है।
एक दृष्टि से तेरे, दुखियों का बेड़ा पार है।। 1।।
दुख में सुख रहता है तो, हमको नया कुछ भी नहीं।
मौज को क्या जीव जाने, दुविधा का सिर भार है।।2।।
दुख में सुख रहता है छुपकर, कष्ट का परिणाम सुख।
बन्ध में मुक्ति की छाया, मुक्ति बन्धाकार है।।3।।
राधास्वामी पूरे सतगुरू, ने बताया भेद को।
मन में अब चिन्ता नहीं है, सुखदाई यह संसार है।।4।।
यं ब्रह्मा वरूणेद्र रूद्र मरूतः स्तवन्ती दिव्य स्तवरं
सांगपदक्रमोपनिषदै गायन्ती यं सामगा।
ध्यानावस्थित तद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो
यस्यान्तं न विदु सुरासुरगणा देवाय तस्मै श्री गुरूवे नमः।।
मस्तराम सुतं देवं फकीर चन्दं पंड़ितम्
परमसंतं दयालं च फकीर चन्दम् जगत गुरूम्।
राधास्वामी!

मेरी अपनी ही आत्मा के स्वरूप सद्गुरू रूप उपस्थित सत्संगी भाईयों और बहनों! आज आषाढ़ महीने का मासिक सत्संग है। मैं इसलिए आपको आषाढ़ महीने की सद्भावना देता हूं। स्वामी जी महाराज ने बारहमासा में आषाढ़ मास के बारे में बताया है। जिसका आशय है कि जब जीव जगत् में आता है तो वो माया के फेर में पड़कर दुखों को झेलता है जब तक कि उसे इन दुखों से छुटकारा दिलाने वाला और उसको परमतत्व से मिलाने वाला गुरू नहीं मिल जाता। मैंने जो मंगलाचरण आपके सामने रखा उसमें कहा गया है कि वह बंधन मुक्त होते हुए भी बंधुआ बन कर बंधुओं को छुड़ाने आता है। लेकिन ये माया जो है इसका कोई मकसद होना दचाहिए। बड़े– बड़े योगी, ऋषि माया में फंस जाते हैं। इसलिए कहा कि 'तेरी लीला कौन समझे तू तो अपरम्पार है'। इसको लीला कहते हैं, इसको खेल कहते हैं।

मैंने जो मंगलाचरण रखा वह जो परमतत्व है जिसे देवों का देव शुद्धब्रह्म, पारब्रह्म, शब्दब्रह्म कहा है वह शब्दब्रह्म से परे जो देव है उसे देव कहा गया है। देव का मतलब हाथ–पांव वाला देवता नहीं है। देव कौन है? जगत् में भी देवता हैं, वे शक्तियां हैं। जो रूप आप मंदिरों में देखते हो, वह रूप काल्पनिक है। अब आप काल्पनिक पर ध्यान लगाते हो तो वह दिखाई भी देने लग जाता है। हालांकि वो होते नहीं हैं। वे उस रूप में दिखाई इसलिए देते हैं क्योंकि आपका मन उस रूप को बनाता है। अगर मन नहीं है तो रूप भी नहीं बनता। मन से ही सारा जगत बनता है। विष्णु इस जगत का मन है इसी से जगत बना है। वह अव्यक्त है, वह स्वयं प्रकट नहीं हुआ, वह गुप्त है। जब प्रकट होता है तो थोड़ी देर में अव्यक्त हो जाता है, जहां से आया है वहीं चला जाता है। सभी जीव उसी में समा जाते हैं। संतमत की प्रथम पुस्तक गीता है। इसमें कृष्ण भगवान अर्जुन को सत्संग देते हुए कहते हैं:

अव्यक्ताद् व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे।
रात्र्यागमे प्रलीयन्ते तत्रैवाव्यक्तसंज्ञके।। 8.18
भूतग्रामः स एवायं भूत्वा भूत्वा प्रलीयते।
रात्र्यागमेऽवशः पार्थ प्रभवत्याहरागमे।। 8.19

ब्रह्मा के दिन के शुभारम्भ में सारे जीव अव्यक्त अवस्था से व्यक्त होते हैं और फिर जब रात्री आती है तो वे पुनः अव्यक्त में विलीन हो जाते हैं। जब जब ब्रह्मा का दिन आता है तो सारे जीव प्रकट होते हैं और ब्रह्मा की रात्री होते ही वे असहायवत् विलीन हो जाते हैं। पहले जगत अव्यक्त था, दिखाई नहीं देता था। सारा जगत जड़ चेतन का जगत, देवी देवताओं का जगत, पशु–पक्षियों का जगत केवल बीच में प्रकट होता है। जब जगत अव्यक्त हो जाता है तो जीव गुप्त हो जाते हैं और जब व्यक्त होता है तो वे जीव पुनः प्रकट हो जाते हैं।

जब सारा सत्संग सुनाने के बाद अर्जुन से पूछा कि कुछ समझ में बात आई कि नहीं! अर्जुन वाचक ज्ञानी नहीं था। उसने सोचा कि अगर यह कह दूंगा कि बात समझ में आ गई तो इसका मतलब होगा कि मैं ज्ञानी बन गया और सत्संग की जरूरत नहीं है। महाराज जी कहते थे कि अच्छे बीजों की खोज करके अच्छी पैदावार हो रही है,

अच्छे नस्ल के पशुओं से अच्छे जानवर और ज्यादा दूध मिल रहा है, लेकिन इंसान की नस्ल सुधारने में परेशानी आ रही है। क्योंकि हमारी सरकार धर्म–निरपेक्ष है। असल में तो धर्म–निरपेक्ष वह होता है जो किसी भी धर्म को नहीं मानता। इसका मतलब धर्म विहीन नहीं है, बल्कि सभी धर्मों के प्रति सहिष्णुता या उदासीनता बरतना है। अमेरिका भी धर्म निरपेक्ष राष्ट्र है लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि वे धर्म को नहीं मानते। वे भी मंदिरों, मस्जिदों और गिरजाघरों में जाते है। अमेरिका के संविधान में लिखा है " This Nation is one God."

धर्म निरपेक्ष का मतलब है किसी एक धर्म को न मानना। मानवता धर्म धर्म–निरपेक्ष धर्म है। संत धर्म–निरपेक्ष होता है वह किसी एक धर्म को नहीं मानता, बल्कि सभी धर्मों का आदर करने वाला होता है। तुम नहीं मानते कि वह सर्वाधार है, वही सर्वाधार तुम्हारे अन्दर है। अगर तुम उसे नहीं मानते तो वह तो तुम्हें मानता है। अगर तुम सत्गुरू को नहीं मानो तो वह तो तुम्हें मान रहा है। वह दयाल दया की धार बहा रहा है। यदि तुम उसकी निन्दा करोगे तो भी वह तुम्हारी रक्षा करेगा।

जब हम बाईबिल पढ़ते हैं तो अंजिल में लिखा है कि 6000 वर्ष पहले यह धरती बनी। जब विज्ञान पढ़ते हैं तो विज्ञान कहता है कि करोड़ों वर्ष पहले यह पृथ्वी बनी। हमारे धर्म में तो ऐसा नहीं है। संतमत कहता है 'अनादि दैवी अनन्त माया जगत को लीला दिखा रही है। सूर्य की विशाल किरणें जगत को अनन्त काल से प्रकाश दिखा रही हैं। तो यह सिलसिला तो अनन्त काल से चला आ रहा है।

तुम उसे स्वीकार करो या ना करो परन्तु वह तुम्हारे अन्दर ही है। यदि यह बात तुम्हारी समझ में आ जाती है तो रास्ता आसान हो जाता है। लेकिन स्वीकार न करना बड़ी भारी भूल है। जब तुम स्वीकार नहीं करते तो खत्म हो जाते हो, सब नष्ट–भ्रष्ट हो जाता है। जब विषयों के अन्दर लिप्त हो जाते हो तब तुम मालिक से प्यार नहीं करते तब तुम भौतिकता को सहारा बना लेते हो। यह नहीं कि विषयों में लिप्त होकर उसे नहीं मिल सकते। केवल मानसिक दृष्टि से अहंकार नहीं होना चाहिए। अहंकार सबसे खतरनाक चीज है। क्रोध भी अहंकार के कारण ही आता है, काम भी अहंकार ही है। इसलिए सन्त अहंकार के

गलत रास्ते पर चलने को मना करते हैं।

ध्यायतो विषयान्पुंसः संङ्गस्तेषूपजायते।
संङ्गत्सञ्जायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते।। 2.62
क्रोधाभ्दवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृतिविभ्रमः।
स्मृति भ्रंशाद्बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति।। 2.63

'यं ब्रह्मा वरूणेद्र रूद्र मरूतः' यह ब्रह्मा, यह विराट, यह वरूण देवता, इन्द्र, सूर्य की शक्ति अग्नि, वायु जिसकी प्रशंसा करते हैं जिससे ऊपर का संगीत निकला है जिसे वेदों और उपनिषदों ने गाया है, योगी जिस पर ध्यान लगाते हैं, देवता और असुर जगत का विरोधाभास जिसका कोई अन्दाज नहीं लगा सकता ऐसे अनन्त जगत के प्रकट करने वाले का ध्यान करो। उसकी शक्तियों का ध्यान नहीं करना चाहिए, अपितु स्वयं उसी का ध्यान लगाना चाहिए। क्योंकि जगत के विषयों का चिंतन करने से उनमें आसक्ति हो जाती है। आसक्ति से मोह, मोह से क्रोध और क्रोध होने से बुद्धि नष्ट हो जाती है, होश नहीं रहता। यही होता है जब उसे स्वीकार नहीं करते। अगर तुम उसे स्वीकार नहीं करते तो तुम्हारा विनाश निश्चित है।

विषयों का चिन्तन करने से
संगति उनसे हो जाती है,
संग उपजाए काम वासना,
काम से क्रोध अग्नि पैदा होती है,
क्रोध से सम्मोहन होता,
मोह से लोभ उपजता है,
लोभ से अहंकार निकले,
अहंकार बुद्धि को हरता है,
बुद्धि हरता हे जो प्राणी,
नष्ट भ्रष्ट जीवन उसका होता है।

मैं यह समझता हूं कि इस संसार में यदि किसी व्यक्ति ने इस जन्म में कोई बुरा काम नहीं किया और उसे कैंसर हो जाता है तो वह सीधा मुक्त हो जाता है। यह मेरा विश्वास है क्योंकि कैंसर असाध्य रोग है। कैंसर में जितने भी बुरे कर्म हैं सब खत्म हो जाते हैं। रामकृष्ण

परमहंस जी को कैंसर था। परमदयाल जी परम प्यारे मामचन्द जी को कैंन्सर हुआ। और वे मुक्त हो गये।

आज के सत्संग के लिए जो मंगलाचरण कहा गया है उसमें उस मालिक को स्वीकार करने को कहा गया है। जगत भी उसी का है, अतः इसे अस्वीकार नहीं करना, इसको मालिक की लीला समझकर स्वीकार करना है।

'तेरी लीला कौन समझे तू तो अपरम्पार है,
एक दृष्टि से तेरे दुखियों का बेड़ा पार है।'

यह जगत उसकी लीला है। सत्गरू को पूर्ण मानो, सत्गुरू को मालिक ही मानो। सन्तमत का उद्देश्य भ्रम और मोह को नष्ट करना है। मैं बतला रहा था कि जब कृष्ण ने अर्जुन से पूछा कि तेरी कुछ समझ में आया कि नहीं, तो अर्जुन बोला–

'नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत
स्थितोऽस्मि गत सन्देहःकरिष्ये वचनं तव।।'18.73

मोह का मतलब है मालिक को अस्वीकार करना, गुरू को अस्वीकार करना और जगत को स्वीकार करना है। यह मनमत बनना है, यही मोह है। मोह नष्ट होते ही अर्जुन कहता है 'मुझे याद आ गया कि मैं कौन हूं, मैं सत्गुरू की अंशी हूं। लेकिन यह याद अपने आप नहीं आई, जब तक अपनी हस्ती को नहीं मिटाया, जब तक शरणागत नहीं हुआ तब तक उसे याद नहीं आई। याद कब आई 'त्वत्प्रसादात्' –यह शरणागति की अवस्था है,। फिर क्या होता है 'गत सन्देहः' जब तक सन्देह नष्ट नहीं होते तब तक नहीं पहुंचता। इसीलिए बार बार सत्संग की जरूरत होती है।

परम दयाल जी महाराज कहते थे कि आपकी मदद करने मैं नहीं गया। जब उन्हें यह ज्ञान हो गया कि इनकी मदद करने वाला उनका अपना ही विश्वास था तो उन्होंने कहा कि हर आदमी अपनी दुनिया अपने विचारों के द्वारा 'जैसा ख्याल वैसा हाल' बनाता है। लोग तो नामदान ले लेते हैं और शराब पीते हैं, मांस खाते हैं। ठीक है, कोई बात नहीं। रोग और भ्रम तो उनके भी नष्ट हो जाते हैं जो इस दृष्टि से गुरू के पास आते हैं कि उनका रोग या भ्रम नष्ट हो जाय। हरेक

आदमी अपनी दुनिया बना रहा है किसी की कोई सुनता ही नहीं। हम कुछ कहते हैं और लोग कुछ और ही करते हैं। लेकिन हमें उन पर दया आती है।

'एक दृष्टि से'' किस दृष्टि से, किस पर पड़ती है वह दृष्टि? जो अधिकारी है उसका भला होता है। अर्जुन पर क्यों दृष्टि पड़ गई क्योंकि उसने अपने अहंकार को नष्ट कर दिया था। हम मालिक के इशारों को नहीं समझ सकते, उसकी लीला को, उसकी वाणी को नहीं समझ सकते क्योंकि वह तो अपरम्पार है। कहते हैं कि 'गुरू मिले फिर कहा कमाना'। ठीक कहा है क्योंकि सत्संग में उसकी दृष्टि अधिकारी पर पड़ती है और उसके सारे भ्रमों का नाश हो जाता है, फिर और क्या चाहिए। मैं बता रहा हूं कि जब इस रास्ते पर आ गये तो किसी से क्या ड़रना। दाता दयाल जी कहते हैं

सुनते नहीं हैं गाफिल मेरा कलाम,
बेजार हो के कहता हूं ताबीर ख्वाब की।'
मौज को क्या जीव जाने दुविधा का सिर भार है।

मौज को जीव नहीं समझ सकता क्योंकि जीव को हर समय भ्रम और संदेह घेरे रहते हैं। जब किसी को शक हो जाता है तो उसकी प्रगति रूक जाती है। प्रेम तो अनन्त की धारा है। प्रेम तो नामी तत्व से निकलता है। यह नामी तत्व तो तुम्हारे अन्दर ही है, तुम्हारी माता के अन्दर भी है और तुम्हारे पिता के अन्दर भी है।

एक सत्संगी था उसका आपरेशन हुआ उससे उसका रोग तो ठीक हो गया लेकिन उसका खाना–पीना बंद हो गया। इससे उसे कमजोरी बहुत हो गई। उसके घर वालों ने कहा कि इनको ग्लूकोज लगवाया जाय। जहां वह लेटा था वहां कोई खूंटी नहीं थी ग्लूकोज की बोतल को लटकाने के लिए तो उसकी चारपाई वहां सरकाई गई जहां खूंटी थी। जब उसे ग्लूकोज चढ़ाया गया तो उसने ग्लूकोज को भी स्वीकार नहीं किया और उसकी मृत्यु हो गई। मैं कह रहा था कि जब कोई मालिक को स्वीकार नहीं करता तो कोई उसे बचा नहीं सकता। स्वामी जी महाराज जी ने भी यही कहा और परम दयाल जी महाराज ने भी यही कहा कि अगर आप जीना चाहते हो तो उसे

स्वीकार करो। यह जगत भी उसी का है इसको भी स्वीकार करना है। कैसे? इस जगत को जगत न मानकर मालिक की लीला मानो। इस बारे में दाता दयाल जी कहते हैं– 'तेरी लीला कौन समझे'। 'अनादि तेरी अनन्त माया जगत को लीला दिखा रही है'। महाराज जी कहते थे कि जिस गुरू को भी तुम मानते हो उसे पूर्ण मानो। अगर उसे पूर्ण नहीं मानते तो तुम सुखी नहीं रह सकतो

एक पंडित मधुसूदन ओझा जी थे जिन्होंने वेदो की व्याख्या बड़े अच्छे ढंग से की है। जितनी भी व्याख्यायें वेदों की उपलब्ध हैं उनमें से मुझे दो व्यक्तियों द्वारा दी गई व्याखायें अच्छी लगीं –एक श्री मधुसूदन ओझा जी की और दूसरी श्री अरबिन्दों घोष जी की। श्री मधुसूदन ओझा जी जयपुर में मानव आश्रम में रहते थे और संस्कृत के प्रकाण्ड़ पंडित थे। उनके शिष्य थे श्री मोती लाल जी शास्त्री। श्री मोती लाल जी शास्त्री ने कालेज की कोई डिग्री नही ली थी हां उन्हें 'शास्त्री' की उपाधि जरूर मिली हुई थी। उन्होंने अपने गुरू का ज्ञान 125000 पन्नों में लिखकर मानव आश्रम जयपुर में रख छोड़ा है। लोग गलत समझते हैं कि वेदों में कुछ नहीं है। सबल ब्रह्म, शुद्ध ब्रह्म, परब्रह्म, शब्द ब्रह्म और परात्पर ब्रह्म की जो व्याख्या वेदों में दी गई है वैसी ही व्याख्या परम दयाल जी महाराज एवं स्वामी जी महाराज ने अपने अनुभव के आधार पर सरल और स्पष्ट शब्दों में की है। सबलब्रह्म ब्रह्मा की शक्ति है, शुद्धब्रह्म विष्णु है और परब्रह्म शिव है। इनसे ऊँचा शब्दब्रह्म है। शब्दब्रह्म गति में है, शब्द से परे जो है उसे परात्परब्रह्म कहते हैं। यह परात्परब्रह्म का ज्ञान महाराज जी ने मुझे दिया।

श्री मधुसूदन ओझा जी एक सप्ताह में एक या दो बार सोते थे, श्री मोतीलाल शास्त्री जी 24 घन्टे में ढ़ाई घन्टे सोते थे। मैं तो चार घन्टे सोता हूं। वे कहते थे कि भ्रान्ति का नाश करना ही हमारा कर्म है। सन्तमत में भी यही है कि भ्रमों का नाश करो। मैं कह रहा था कि जब अर्जुन ने कहा 'नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा' मेरा मोह नष्ट हो गया है, वो मोह क्या था? ईश्वर को अस्वीकार करना और जगत को स्वीकार करना। यह बात मैं शुरू से कहता आ रहा हूं कि यह मन मते चलना है। 'स्मृतिर्लब्धा' याद कब आई, याद अपने आप नहीं आई, 'त्वत्प्रसादात्'

आपकी कृपा से अर्थात् जब वह शरणागत हो गया। जब तक संदेह नष्ट नहीं होते तब तक अपनी हस्ती को नहीं पहचाना जाता और मंजिल पर भी नहीं पहुंचा जाता। इसलिए सत्संग की जरूरत होती है।

परमदयाल जी कहते थे कि ऐ सत्संगियो! तुम मेरे गुरू हो। अब तक मैं समझता था कि जो गुरू प्रकट होते हैं वे बाहर से आते हैं, लेकिन जब तुम कहते हो कि मैं प्रकट होता हूं और मैं नहीं होता तो मुझे पूरा विश्वास हो गया कि जो मेरे अन्दर प्रकट होता था वह भी मेरे अन्दर का ही रूप था, कहीं बाहर से नहीं आता था। 'एक दृष्टि से तेरे' दृष्टि किस पर पड़ती है? अधिकारी पर पड़ती है। जब कोई पूरे विश्वास से आता है तो उस पर दृष्टि पड़ती है। लेकिन कोई गुरू की बात को भी नहीं मानता। किसी को कोई खपत है किसी को कोई, सब अपने अहंकार के कारण अपने आपको ठीक और दूसरे को गलत समझते हैं और दुख–सुख उठाते हैं।

तो मैं बता रहा था कि श्री मधूसूदन ओझा जी के पास कीमती स्मृति ग्रंथ थे जिनको दीमक लग रही थी। एक बार राजा मानसिंह उनसे मिलने गया तो उन्होंने कहा कि यह कीमती साहित्य नष्ट हो रहा है। राजा ने तुरंत अपने वजीर को कहा कि इन्हें तीन आलमारी खरीद कर दे दो। तो वजीर बोला कि महाराज यह खर्चा बजट में नहीं है। कोई समझता नहीं है गुरू की बात को। राजा ने कहा कि इससे जरूरी कोई और चीज नहीं हो सकती, आप इन्हें तीन आलमारी दे दो। तब वह साहित्य संभल पाया।

अन्त में अर्जुन कहता है 'करिष्ये वचनं तव' जो आप आज्ञा देंगे मैं वही करूंगा। यह है उसकी लीला जो अपरम्पार है। पार वाला भी अपरम्पार होता है। लोग उसके विराट पने को नहीं समझते। जब गुरू के विचारों को कोई नहीं समझता, गुरू की वाणी पर कोई अमल नहीं करता तो उसका बेड़ा कैसे पार होगा। महाराज जी ने नारा दिया 'मनुष्य बनो'। महाभारत के रचियता श्री वेदव्यास जी ने भी यही कहा कि धर्म पर चलो और यही बात परम दयाल जी महाराज और दाता दयाल जी महाराज ने भी कही है।

मौज को जीव नहीं समझता क्योंकि दुविधा का सिर पर बोझा लाद रखा है। महाराज जी कहते थे कि तुम पूर्ण होते हुए भी अपने आपको पूर्ण नहीं मानते। शक से आपकी प्रगति रूक जाती है। दुविधा का मतलब यही है कि कभी विश्वास कर लिया और कभी नहीं किया। मैं कहता हूं कि यह प्रेम की बात है जो 24 घन्टे का है, एक समय का नहीं है। जब मैं अमेरिका में पढ़ाता था तो कहता था कि प्रेम एक धारा है अनन्त की। जब तुम अपनी मां से प्रेम करते हो तो तुम उसके शरीर से प्रेम नहीं करते बल्कि तुम्हारे अन्दर जो धारा निकल रही है वही धारा तुम्हारी मां के अन्दर से भी निकल रही है। जहां वे दोनों धाराऐं मिल जाती हैं, वही प्रेम का केन्द्र बन जाता है। नामी तत्व तुम्हारे अन्दर भी और वही नामी तत्व तुम्हारी मां के अन्दर भी है।

प्रेम उसी की धार है। अगर तुम में प्रेम नहीं है तो तुम मालिक के साथ धोखा कर रहे हो, उस पर पर्दा ड़ाल रहे हो। यह गलत कर रहे हो। अगर तुम प्रेम कर रहे हो, निस्वार्थ प्रेम कर रहे हो तो तुम उस अविनाशी तत्व को प्रकट कर रहे हो, गुरू को प्रकट कर रहे हो। इस प्रेम से अविनाशी तत्व का, गुरू का और तुम्हारा भेद मिट जायगा और तुम उसी अविनाशी तत्व में समा जाओगे, गुरू तत्व में समा जाओगे। जो जिससे प्रेम करता है वह वैसा ही हो जाता है। ज्ञान कुछ नहीं है प्रेम के मुकाबले में। जब प्रेम होता है तब दुविधा मिट जाती है।

'सुख दुख से एक परे परमसुख सो सुख रहा समाई।
कहे कबीर यह उनमुनी रहनी सोई प्रकट कर गाई।।'

उसकी वाणी उसके अनुभव से निकल रही है। इसलिए तुम उसको सुनो। महाराज जी ने मुझे एक पत्र में लिखा कि मौज में रहा करो। वास्तव में और कोई रास्ता ही नहीं है मालिक से मिलने का सिवाय इसके की उसकी मौज में रहा जाय। उस हालत को उनमुनी हालत कहा जाता है यह तब आती है जब निस्वार्थ प्रेम होता है,। इसे बताया नहीं जा सकता। आगे दाता दयाल जी कहते हैं कि सुख में भी दुख छिपा रहता है। तुम्हें सुख के लिए टैक्स देना पड़ता है। तुम सत्संग में आये हो तो दुख उठाकर आये हो और सत्संग में बैठे हो तो भी कष्ट उठा रहे हो, उसके बाद तुम्हें सुख मिलेगा।

'बंध में मुक्ति की छाया मुक्ति बंधाकार है'। एक फकीर था। उसके इब्राहीम नाम का एक शिष्य था। जब वह शिष्य बादशाह के दरबार में रोजगार के लिए गया तो उसे गुलाम बना कर रखा गया। जब बादशाह ने उससे पूछा कि क्या लेगा, वह बोला जो आप दोगे। क्या खायगा, जो आप दोगे, क्या पहनेगा जो आप दोगे। हम तो हुजूर के गुलाम हैं हमारी अपनी कोई इच्छा नहीं है। यह बात सुनकर बादशाह ने उसे आजाद कर दिया और अपने आपसे कहा कि मैं ही इतना बेवकूफ हूं कि बादशाह होते हुए भी उस मालिक पर भरोसा न कर सका, आज इसने मुझे असली सबक सिखाया है।

यदि आप भी गुरू के गुलाम हो गये तो आप भी आजाद हो जाओगे, आपका भी काम बन जाएगा। जो मालिक को ढूंढ़ता है वह मालिक ही बन जाता है। जब मालिक पर विश्वास इतना अधिक हो जाता है तो फिर मालिक भी पिंघल जाता है और वह अपने मुरीद का गुलाम बन जाता है और मुरीद मालिक का मलिक बन जाता है। मीरा ने भी तो यही कहा था–

जित बिठाए तित मैं बैठूं जो देवे सो खाऊँ,
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, वो बेचे तो बिक जाऊँ।
मैं तो प्रेम दीवानी, मेरा दर्द ना जाने कोय।

'राधास्वामी ने भेद बताया' राधास्वामी पूरे सत्गुरू ने जो इस शरीर में आया हुआ है, वह भेद को बताता है। वह तुम्हारी तरह ही खाता है, पीता है, कभी कभी क्रोध भी करता है, लेकिन उस क्रोध से तुम्हारा कल्याण हो जाता है। मैं आज यह भेद बता रहा हूं कि जब तुम्हारी बुद्धि काम नहीं आयेगी तब गुरू तुमको भेद आसानी से समझा देता है। क्योंकि वह परमतत्व जो है। शरीर तो सभी का नाश हो जाता है, गुरू का शरीर भी नाशवान है लेकिन उसके अन्दर जो अविनाशी तत्व है उसका कभी नाश नहीं होता।

'संत सतगुरू तुझको कहते हैं मैं तो सिर्फ इतना जानता हूं कि तू दया का सागर है और प्रेम का भण्डार है। इससे ज्यादा मुझे कुछ जानने की जरूरत नहीं है। तू जो है, जैसा है वैसा ही रह मुझे क्या फर्क पड़ता है। मुझे तो सिर्फ इतना पता है कि तू मुझसे अलग कोई दूसरा नहीं है।

सबको राधास्वामी!

सत्संग परम संत हुजूर मानव दयाल जी महाराज

(मानवता मंदिर होशियारपुर–मासिक सत्संग)

तारने वाले ने तारा, तर गये सब तर गये।
जिसको तरना था तरे, भवनिधि के वह तट पर गये।
लालची कामी तरे, क्रोधी तरे मोही तरे।
नीची योनी में जो थे, वह नाम ले ऊपर गये।।
तारने वाले ने तारा, तार तरने का बंधा।
अब हो क्या चिंता किसी को, उसके जो दर पर गये।।
आये शरनागत जो उसके, कर लिया जीवन सुफल।
अब नहीं तरने में संशय, काम अपना कर गये।।
राधास्वामी ने दया की, लाये नौका शब्द की।
जो चढ़े वह तर चले, चूके जो वह सब मर गये।।

आज के मासिक सत्संग से पहले एक सत्संग पहले शनिवार को हुआ था। आज के सत्संग में जो शब्द दाता दयाल जी का पढ़ा गया है वह बहुत ही सरल है लेकिन बहुत ही गहन और गम्भीर भी है। इसको समझने के लिए पवित्र बुद्धि चाहिए। सामान्य बुद्धि कई बार रूकावट डालती है। इसलिए जब तुम सत्संग में आया करो तो अपनी बुद्धि पर न जाया करो। जो बुद्धि आपकी है वह सामान्य बुद्धि है। गीता में श्री कृष्ण कहते हैं–

'बुद्धौ शरणमन्विच्छ कृपणाः फलहेतवः। 12.49

अर्थात् समत्वबुद्धियोग का आश्रय ग्रहण कर; क्योंकि फल की वासना वाले अत्यन्त दीन है। गीता संतमत का पहला और उच्चतम ग्रंथ है। पहला इसलिए क्योंकि उन्होंने दो शब्द प्रकट किये जो कलियुग में प्रकट होने थे। पराभक्ति को कलियुग में नाम आधार से पैदा होना था, वह भगवान कृष्ण ने द्वापर में ही प्रकट कर दी। स्वामी जी महाराज कहते हैं 'सतयुग त्रेता द्वापर बीता काहू न जानी शब्द की रीता। शब्द की रीति क्या हैं–शब्द योग। काहू न जानी यहां 'जानी' से मतलब अनुभव में लाने से है, जानने से नहीं। लोग संतमत को नहीं समझते, इसलिए जीवित गुरू की जरूरत है।

गुरू तारेंगे हम जानी तू सूरत काहे बौरानी' यहां भी 'जानी' का मतलब जानना नहीं है बल्कि अनुभव में लाना है, इसके अन्दर रहना है। इसलिए शब्द सनेही बनो, शब्द सनेही का मतलब है जो शब्द के अन्दर रहता है। शब्द आकाश के अन्दर है और वही शब्द हमारे घटाकाश में भी है। जब कोई उस शब्द के अन्दर रहते हुये मस्ती में रहता है तब वही कह सकता है कि 'गुरू तारेंगे हम जानी, तू सूरत काहे बौरानी।'

1982 में जब मैं यहा आया था तो यहां पर मानवता मंदिर में कुछ आपस में राजनैतिक अस्थिरता थी। किसी ने कहा पुलिस बुला ली गई है। जब मैं स्टेशन पर उतरा तब पहले तो नन्दलाल जी मुझे मिले और उन्होंने कहा कि यहां बड़ी गडबड है। मैंने कहा कोई गडबड नहीं है। उन्होंने कहा कि आपको क्या पता? मैंने कहा, 'मुझे सब पता है।' उन्होंने कहा, 'मैंने अपने आदमी भेजे हुये हैं। 'मैंने कहा कि महाराज जी ने लिखा है कि बाहर के जितने भी सन्त हैं उनमें प्रेम का संबंध है। मैंने उनसे पूछा कि आप इस बारे में क्या जानते हो? वो घबड़ा गये। उन्होंने दो–चार शंकायें बताईं। मैंने उनको और पीसे–मोंगा जी को कहा कि ये शंकायें बेबुनियाद हैं। मैंने कहा कि चलो मेरे साथ। वे बोले आयेंगे।

मैंने उनसे कहा कि आप लोग ने महाराज जी के साथ रहते हुए भी कभी यह नहीं समझा कि सन्त क्या होता है? उसके बाद वहां पर मुझे श्री एस. एन. भारद्वाज जी मिले। मैंने उनसे कहा– 'गुरू तारेंगे हम जानी तू सूरत काहे बौरानी।' यह वाचक ज्ञान नहीं है। कृष्ण भगवान ने स्वयं अनुभव किया और अर्जुन को अनुभव कराने का प्रयास किया। शास्वत् सत्गुरू कृष्ण है और शास्वत् सत्संगी अर्जुन। हरेक सत्संगी अर्जुन है और हरेक सत्गुरू कृष्ण है।

भगवत् गीता संतमत का पूरा ज्ञान है और भविष्य में आने वाले संतमत का दर्पण है, शीशा है। अर्जुन को अन्त में क्यों उद्बोधन मिला पहले क्यों नहीं मिला? क्योंकि जब तक सत्गुरू का सत्संग नहीं मिलता तब तक आपके शक–सन्देह, आपकी जो कमजोरियां हैं वे दूर नहीं होते। जब कमजोरी दूर हो जाती है, जब सन्देह नष्ट हो जाते हैं तब विश्वास जाग्रत हो जाता है। तुम्हारी आत्मा की शक्ति इसलिए कमजोर है क्योंकि तुम्हारा मन चंचल है। जिसका मन टिका हुआ होता है उसके मन के संकल्प की शक्ति बढ़ी हुई होती है।

जब मनुष्य अपना कोई एक लक्ष्य या मकसद बना लेता है तब उसका मन टिक जाता है। यह रहेक के बस का नहीं है। मुझे याद आता है जब मैं लाहौर में पढ़ता था अभी एम0 ए0 संस्कृत का पहला ही साल था तो मुझे होस्टल छोड़ कर जाना पड़ा। उसका कारण यह था कि ओरियन्टल कालेज के वाइस प्रींसीपल मौलाना इकबाल थे और वहां पर नोन–वेज बनता था और हम प्याज भी नहीं खाते थे तो हमको उस खाने से डाइसेंट्री हो गई। डाक्टर ने कहा कि आप कोई पार्ट–काम शुरू कर दो। हमने टयूशन पढ़ाने का काम शुरू कर दिया। पहले ही दिन दो छात्राऐं आ गईं। फिर चलते–चलते 400 छात्र हो गये। मैं बता रहा था कि जब आपका कोई लक्ष्य बन जाता है तब आप प्रगति करते हो। जब जीवन का लक्ष्य बदल जाता है तो दुनिया की जो हमारी आशाऐं हैं, वासनाऐं हैं जैसे पैसे कमाने की इच्छा, अच्छे कपड़े पहनने की इच्छा आदि तो वे इच्छाऐं अपने आप पूरी होनी शुरू हो जाती हैं। इसलिए जीवन में जीने का कोई लक्ष्य बनाना जरूरी है।

इसके साथ–साथ आपको अपना एक इष्ट भी बनाना जरूरी है चाहे किसी को इष्ट बनाओ चाहे राम को बनाओ चाहे कृष्ण को बनाओ या अन्य किसी देवी देवता या पैगम्बर को बनाओ। आपको कामयाबी आपके मन के आपके इष्ट पर टिकने से मिलेगी। लेकिन यदि तुम चाहते हो कि इस जगत के कारागार से इस भवसागर से तर जांय तो तुम्हारा इष्ट कोई जीवित गुरू होना चाहिए। ऐसा सत्गुरू जो साक्षात् शरीर में मौजूद हो क्योंकि तुममें अपना आत्म विश्वास नहीं है। इसलिए सत्गुरू वक्त की जरूरत है।

इस संसार में सबसे बड़ा रोग सबसे बड़ा कष्ट बारम्बार जन्म लेना और मरना है। इस जगत् के अन्दर रहते हुए भी दुख–तकलीफें हैं। इस शरीर के रोगों से बचने के लिए आपको ऐसे डाक्टर ऐसे हकीम की जरूरत है जो जीता जागता है। अगर आप रोगमुक्त होना चाहते हैं तो धवन्तरी–धवन्तरी रटने से कुछ नहीं होगा। किसी जिन्दा डाक्टर के द्वारा बताये गये इलाज से ही आप ठीक हो सकते हैं। किसी ने दाता दयाल जी से पूछा कि किस गुरू को माने जिन्दा या गुजरे हुए को? तो दाता दयाल जी ने कहा कि कौन सा चिराग रोशनी देता है–बुझा हुआ या जलता हुआ! मैं इससे भी एक कदम आगे जाना चाहता हूं कि चिनाग बुझता ही नहीं। चिराग उन लोगों के लिए बुझता है जिनकी आंखें नहीं हैं। अगर तुम्हारा दिल बुझ गया तो तुम्हारा चिराग

खुद ही बुझ गया। इकबाल ने लिखा था–

दुनिया की महफिलों से उकता गया हूं यारो।
क्या लुत्फ है अन्जोमन में जब दिल ही बुझ गया।।

अन्जोमन का मतलब है समाज। मैंने बहुत सी सोसाइटियों में भाग लिया जब तक प्रोफेसर रहा। मेरा डिपार्टमेंट रोशन रहता था बाकी के बुझे रहते थे। एक बार मुझे एक इन्टरमीडियेट कालेज में लगाया गया। प्रींसीपल ने मुझे इन्डोर गेम का इंचार्ज बना दिया। कैरम और शतरंज वगैरहा का। मैं तुम्हें बता रहा हूं कि यदि तुम्हारा दिल बुझा हुआ नहीं है तो तुम दुनिया से नहीं उकताओगे। कृष्ण ने जो उपदेश अर्जुन को दिया वह कलियुग में भविष्य में आने वाली नस्लों के लिए है कि उन्हें शब्द योग की पद्धति को अपनाना होगा। अर्जुन ने अन्त में यही कहा कि महाराज आपने जो कुछ मुझे कहा है उसका प्रभाव यह हुआ है कि मेरा शक दूर हो गया। यह नहीं कहा कि मैं समझ गया। उसने कहा कि मेरा संदेह नष्ट हो गया

'नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत।
स्थितोऽस्मि गतसन्देहः करिष्ये वचनं तव।'

मेरा मोह नष्ट हो गया। मोह कब नष्ट होगा जब सत्गुरू का प्रसाद मिलेगा। सत्गुरू के बिना मोह नष्ट हो ही नहीं सकता। मुझे याद आ गई किस बात की कि मैं कौन हूं। मैं परमतत्व हूं। कैसे मिला मुझे यह ज्ञान–त्वत्प्रसादात्। इसमें अहंकार नहीं है। अगर तुमने गुरू को निर्मल नहीं माना तो तुम खुद निर्मल नहीं हो। 'देवं भूत्वा देवं भजेत्'। देव की पूजा करने के लिए देव बन कर पूजा करो। अगर तुम दयाल नहीं हो तो दयाल के पास आओ वह अपनी दयाल दृष्टि से तुम्हे भी दयाल बना देगा। लेकिन–

गुरू बिचारा क्या करे जब हृदय भया कठोर।
नौ निभय पानी भरा फिर भी ना भीगी कोर।।

'कोर' कहते हैं पत्थर को। हां तो अर्जुन कह रहा है 'मुझे याद आ गई लेकिन कैसे? आपकी कृपा से, अपनी वजह से नहीं।' हे परमतत्व! मैं गिर गया था। भगवान कृष्ण की रेडियेशन मिलने के बाद फिर उसने यह नहीं कहा कि अब मैं कानों में उंगली देकर तेरा भजन करूंगा, इसकी उसे जरूरत नहीं थी। उसने कहा जो आपने आज्ञा दी है महाराज मैं वेसा ही करूंगा। उसने कहा कि अब मैं अपनी इच्छा से कुछ नहीं करूंगा।

तारने वाले ने तारा, तर गये सब तर गये।
जिनको तरना था तरे, भव निधि के तट पर गये।।

उसकी कुछ शर्तें हैं तारने वाले की। तरने वाला अर्जुन जैसा होना चाहिए और सत्गुरू भी कृष्ण जैसा होना चाहिए। सत्गुरू निष्काम कर्म करता हुआ होना चाहिए।

सुदामा बहुत गरीब ब्राह्मण था। जब उसकी पत्नी को पता चला कि श्री कृष्ण उनके सहपाठी हैं तो वह अपने पति को द्वारका जाने और श्रीकृष्ण से मिलने की जिद रोज रोज करने लगी। अन्त में सुदामा राजी हो गये तो उसकी पत्नी ने एक पोटली में थोड़ा सा चिवड़ा बांध कर दे दिया। जब सुदामा द्वारका पंहुचे तो वह नंगे पैर थे और कपड़े भी फटे हुये थे। महल के सामने खड़े द्वारपाल से जब सुदामा ने कहा कि मैं श्रीकृष्ण का सहपाठी हूं मुझे उनसे मिलना है तब वे सब हंसने लगे कि लगता है कोई पागल है क्योंकि उसकी वेश–भूषा ही ऐसी थी। लेकिन फिर भी उनमें से एक अन्दर गया और सारा हाल बता दिया।

कृष्ण झट से उठकर द्वार की ओर भागे और सुदामा को गले लगाया और पूछा कैसे आये! फिर उन्होंने उन्हें सिंहासन पर बैठाया और रानियों से उनका परिचय कराया। श्रीकृष्ण ने कहा कि तुम तो बहुत ज्ञानी–ध्यानी थे कहो आपकी भक्ति कैसी चल रही है। भाई! मैं तो पूजा–पाठ करता नहीं। लेकिन निष्काम कर्म जरूर करता हूं। सत्गुरू जो काम करता है वह अपने स्वार्थ के लिए नहीं करता, इसलिए मैं तो मस्ती में रहता हूं। सुदामा बोला महाराज कुछ न पूछो मैं तो बहुत गरीब हूं भक्ति–वक्ति कुछ याद नहीं रही, भूख के सामने। कृष्ण ने सुदामा से कहा कि ला भाभी ने मेरे लिए क्या दिया है 'पुष्पं, फलं, तोयं' अर्थात् जो भी कुछ लाया है मुझे अर्पण कर दे! सुदामा उस पोटली को छुपाने लगा और कहने लगा कि मैं तो गरीब हूं कुछ नहीं लाया हूं। श्रीकृष्ण बोले यह तो तुम्हारी पुरानी आदत है। तुम्हें याद है जब गुरू माता ने हमें और तुम्हें जंगल से लकड़ी लेने भेजा था तब उन्होंने मेरे हिस्से के चने भी तुम्हारी पोटली में बांध दिया थे। जब जंगल में वर्षा होने लगी थी तब हम अलग–अलग पेड़ पर चढ़ गये थे। तुमने अकेले ही वे सब चने खा लिये थे और जब मैंने पूछा कि सुदामा क्या खा रहा है तो तुमने यह कह कर टाल दिया था कि सर्दी के कारण तुम्हारे दांत कटकटा रहे हैं।

कृष्ण ने कहा कि चलो पुरानी बात छोड़ो अब जो भाभी ने मेरे लिए दिया है निःसंकोच मुझे दे दो और सुदामा ने वो पोटली कृष्ण के हाथ में थमा दी। कृष्ण ने पोटली खोली और एक मुट्ठी चावल खा लिए, दूसरी बार में भी ऐसा ही किया जब वे तीसरी बार ऐसा करने लगे तो रूकमणी ने कहा कि महाराज आप अकेले ही सारे तंदुल खा लोगे हमें कुछ नहीं दोगे (साथ ही यह भी कह दिया कि दो लोक का साम्राज्य तो दे दिया अब तीनों लोकों का साम्राज्य उन्हें दे दोगे तो हमारे लिए क्या सोचा है?) कहने का मतलब यह है कि श्रीकृष्ण ने सुदामा के चावल खाकर उसकी गरीबी दूर कर दी और यह सिद्ध कर दिया कि सत्गुरू जो निष्काम कर्म करता है वह किसी न किसी की भलाई के लिए ही करता है।

पहले अर्जुन अपने अभिमान में था और कहता था कि वह युद्ध नहीं करेगा क्योंकि उससे रक्तपात होता है और अनेक आशंकाऐं और तर्क दिये उसने युद्ध न करने के पक्ष में। जब उसे ज्ञान हो गया तब कहता है 'करिष्ये वचनं तव'। पहले अर्जुन अपने अहंकार में था और अब कहता है 'त्वत्प्रसाद्' अब मैं पूर्ण शरणागत हूं। यह महिमा है सत्गुरू की और सत्संग की।

'तारने वाले ने तारा तर गये सब तर गये।'

संजय सुना रहा है धृतराष्ट्र को और कह रहा है कि यह मैंने उनका सत्संग सुना जिसको याद करके बार–बार मेरा मन पुलकित हो रहा है। अन्त में गीता कहती है–

यत्र योगेश्वर कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।

तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम। 18.78

जहां कृष्ण जैसा सत्गुरू हो और अर्जुन जैसा शिष्य हो वहां विजय निश्चित है। जहां माया पर विजय होगी वहां पर विभूति और अचल नीति होगी। अब बताओ गीता में संतमत है कि नहीं! जब यह बात समझ में आ जाती है तब वह कहने लगता है 'तारने वाले ने तारा तर गये सब तर गये।' 'नाम ले ऊपर गये' का मतलब है जब भक्त मस्ती में आकर नाम लेते–लेते अपने आपको भूल जाता है तब वह भव–निधि को तर जाता है। यहां 'नाम लेने' से अभिप्रायः नाम रटने से नहीं है।

तू तू कहता तू भया मुझमे रही न हूं।
बलिहारी तेरे नाम की जित देखूं तित तू।'

इस जगत् के अन्दर हम आये तो अनन्त से हैं, अनामी धाम से हैं, निज धाम से हैं जहां पर मृत्यु का काम नहीं है, जहां पर किसी भी बात की कोई सीमा नहीं है, जहां पर सच्चिदानन्द नहीं है, जहां पर अनन्त आनन्द है। सच्चिदानन्द तो तुम खुद ही हो, लेकिन जो पूर्णानन्द है तुम वहां से आये हो। इस जगत् में आकर अपने असली नाम और पते को भूल गये। इसका ज्ञान भगवान कृष्ण ने गीता में दिया है–

अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत।

अव्यक्तनिधनान्येव तत्र का परिदेवना। 2.28

घबराता क्यों है अर्जुन! दुर्योधन मरेगा, भीष्मपितामह भी मरेंगे, अरे सभी जीव अनित्य होने के कारण मरेंगे। इसलिए उनके शरीरों के लिए शोक करना उचित नहीं है। जो भी दिखाई दे रहा है वह मरेगा। जो दिखाई नहीं दे रहा है वह नहीं मरेगा क्योंकि वह अविनाशी है। यदि वह सबके अन्दर न हो तब तो मैं मानूं कि यह कामी है, क्रोधी है, लालची है। सम्पूर्ण प्राणी जन्म से पहले बिना शरीर वाल थे और मरने के बाद भी बिना शरीर वाले ही रहेंगे, केवल बीच में शरीर वाले प्रतीत होते हैं, फिर इस विषय में क्या चिन्ता करनी। यह ज्ञान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को दिया। और यहां पर दाता दयाल जी कह रहे हैं 'कामी तरे क्रोधी तरे पापी तरे अनन्त' अर्थात् जिन्होंने पकड़ लिया वे अपने इष्ट का नाम लेकर ऊपर चले गये, नाम लेते–लेते वे सब नामी बन गये। इसलिए ऐसे व्यक्ति को अधिकार है, उसका संस्कार है कि वह कहे 'तारने वाले ने तारा'। तारने वाले का तार ऊपर से बंधा होता है, इसलिए तुम उसे पकड़े रहोगे तो तुम भी तर जाओगे। 'दे खोल दृष्टि तुझे पिछाने दर्श पर्ष करके तुझको माने।' उसका तार ऊपर बंधा हुआ है और जो उससे जुड़ जाता है वह भी तर जाता है। 'तार तरने का बंधा अब नहीं तरने में संशय' जिसका तार उससे बंधा हुआ है, जब वह तुम्हें मिल गया अब क्या चिन्ता, क्या संशय।

उसके दरबार में आते ही तुम तर जाओगे, इसमें कोई शक नहीं है। फिर निश्चय की शक्ति मिल जाती है। 'आये शरणागत जो उसकी' जब तुम अपने इष्ट की शरणागत पूर्ण रूप से हो जाते हो तो तुम्हारा काम बन जाता है। अर्जुन ने अपना जीवन सफल किया कि नहीं! कैसे सफल किया? पूर्ण शरणागत होकर। जो गुरू की बुद्धि पर चलता है उसका काम बन जाता है। 'अब नहीं तरने में संशय' –पहले क्या कहा उसने कि आप की कृपा से

चेत गया हूं 'गतसंदेहः' अर्थात् शंका चली गई। इसमें दोनो बातें आ गईं। जब शरणागत हुआ तो संदेह अपने आप चले गये। इसलिए जो पूरी तरह शरणागत हुआ तो उसके तरने में कोई संशय नहीं है। हजारों लोग सत्संग में आते हैं लेकिन उनमें से कोई एक या दो ही पूर्ण शरणागत हो पाता है और तरने का अधिकारी बन पाता है।

'राधास्वामी ने दया की लाये नौका शब्द की' यह शब्द की नौका कौन सी है? कोई सन्त हवाई जहाज लेकर नहीं आता। कोई कहते हैं कि बाबा सावनसिंह जी घोड़ा लेकर आये, परम दयाल जी हवाई जहाज लेकर आये। जब परमदयाल जी ने बाबा सावनसिंह जी से पूछा कि क्या आप जाते हो तो उन्होंने कहा कि मैं नहीं जाता। इस पर परमदयाल जी ने कहा कि फिर तुम इन्हें सच्चाई क्यों नहीं बताते? तो उन्होंने कहा कि एक तो लोग अधिकारी नहीं हैं और दूसरे इससे मेरा डेरा भी चलता है। लेकिन तुम सच्चाई को बताओ मैं तुम्हारा पुस्तेपनाह हूं। यह बात सांकेतिक होती है। एक सत्संगी ने मुझे बताया कि उसके पिता जी ने जब शरीर छोड़ा तो वे कहते थे कि उन्हें लेने मानवदयाल हाथी लेकर आया है। मैंने उससे कहा कि मैंने तो उसकी शक्ल तक भी नहीं देखी, मैं उसके पास हाथी लेकर नहीं गया।

जब मैं समाधि से उठा तो मुझे ज्ञान हुआ कि उसके पिता को मेरे सत्संग में जो ज्ञान मिला था वह ज्ञान हाथी के रूप में उसे लेने आया होगा। यह मतलब है 'राधास्वामी ने दया की लाये नौका शब्द की'। नौका वो है जिस पर विश्वास के साथ बैठकर आप पार जा सकते हो,। अगर विश्वास है तो नौका चाहे जैसी भी हो, आपको अधिकारी बना देगा और उसी नौका में आप पार चले जाओगे। तो वह तर गया कौन तर गया, जिसने पहचान लिया।

जो शब्द आज आपने सुना, यह दातादयाल जी का है। मैंने आपको बताया कि आप अविनाशी हो। जो विश्वास करेगा उसके साथ परमतत्व का यह ज्ञान जायेगा, तुम्हारे साथ तुम्हारा कोई रिश्तेदार नहीं जायेगा,। जिस इष्ट के प्रति तुम अपना सब कुछ न्यौछावर कर देते हो,जब उसके यह शब्द तुमको शरीर छोड़ते हुए याद आयेंगे तब एक क्षण के अन्दर ख्याल आयेगा कि मानव दयाल ने मुझे ऐसा कहा था, फिर तुम्हारा मोह नष्ट हो जायेगा, जो भी पाप आपने किये हैं, वे सब नष्ट हो जायेंगे और आप सीधे ऊपर जाओगे, यह मतलब है इसका कि सब तर गये। सबको राधास्वामी!

सत्संग परम संत हुजूर मानव दयाल जी महाराज

(मानवता मंदिर होशियारपुर–मासिक सत्संग ब्यास पूर्णिमा)

धन्य धन्य सतगुरू दयाला, कृपा सागर दुख भंजन।
संकट मोचन भव भय खंजन, काम निकंदन जन रंजन।।
कोटि काम छवि अंग विराजे, शोभा धारी हितकारी।
सुर मुनि ऋषि सब ध्यान लगावें इन्द्र वरूण आज्ञाकारी।।
शेष सहस मुख वरणे महिमा, नारद शारद गुन गावें।
अस्तुति ठाने पूजा धारें भक्ति अनुपम वर पावें।।
अपरम्पार पार पुरूषोत्तम, व्यापक वरज महान महा।
वेद बतावें लीला तेरी, समझ समझ पद पदकमल गहा।।
तू है सिंध अगाध गंभीरा, लहर विष्णु अज त्रिपुरारी।
धन्य धन्य तू धन्य धन्य है, धन धन तू जगदाधारी।।
सबका प्यारा सबका प्रीतम घट घट का तू नित वासी।
आनन्द मंगल रूप है तेरा, आनन्द मय आनन्द रासी।।
सहस कमल में ज्योति निरंजन, त्रिकुटी पद का ओकारा।
सुन्न महासुन्न पारब्रह्म तू, भंवर गुफा सोहंग सारा।।
सत्तलोक का सत्त पुरूष तू, अलख अगम का करतारा।
राधास्वामी धाम में राधास्वामी, सुरत शब्द का भंडारा।।
तेरी सेवा तेरी पूजा, तेरा सुमिरन ध्यान रहे।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, तेरा ज्ञान हर आन रहे।।
यं ब्रह्मा वरूणेद्र रूद्र मरूतः स्तवन्ती दिव्य स्तवरं
सांगपदक्रमोपनिषदै गायन्ती यं सामगा।
ध्यानावस्थित तद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो
यस्यान्तं न विदु सुरासुरगणा देवाय तस्मै श्री गुरूवे नमः।।
परमतत्वस्य अवतारं परम पूज्यं सत्संगिनाम्।
मानवस्य परमइष्टं फकीरं वंदे जगत गुरूम्।।
राधास्वामी!

मेरे आत्मस्वरूप सभी सत्संगी भाइयों और बहनो! आज गुरू व्यास पूर्णिमा का शुभ अवसर है। गुरू मत में एक विशेषता है। कई मत मतान्तर प्रचलित हैं। ऋषि मुनियों ने अनेक प्रकार के योग, अनेक प्रकार के साधन मनुष्य को अपने निज घर पहुंचाने के लिए बताये। वास्तव में कोई भी किसी योग के अन्दर भी संतसत्गुरू मौजूद नहीं है ऐसी बात नहीं है किन्तु समय की जरूरत के मुताबिक संतसत्गुरू प्रकट होते आये हैं। इसी सिलसिले में राधास्वामी दयाल प्रकट हुये जीवों को चिताने के लिए क्योंकि जीव भी तो उसी के हैं। उसे आप परमतत्व कह लो, परब्रह्म कह लो, राधास्वामी दयाल कह लो। वो सर्वाधार है, जो कुछ भी इस जगत् में है जड़–चेतन, जीव, प्राणी, पशु वो सब उसी पर आधारित हैं, उसी से निकले है, उसी में स्थित हैं और उसी में समाविष्ट भी हो जाते हैं। यह ध्रुव सत्य है,,यह हमेशा हमेशा ठहर जाने वाला सत्य है। उसको कहते हैं ठहरा हुआ, उसी को कहते हैं 'आये धुरपद धामी'। वह जो जगह है, वह जो आधार है वहां कोई हलचल नहीं है, वहां गति नहीं है। यह सारा जगत् उस पर टिका हुआ है और यह जगत् जो चल रहा है, यह किसी ऐसे तत्व के कारण चल रहा है, जो स्वयं नहीं चलता।

यह जगत् ब्रह्मा, विष्णु और शिव की शक्ति से बना, ठहरा और समाविष्ट होता है। सन्त कहते हैं इस जगत् का स्वरूप विराट, अव्याकृत और हिरण्यगर्भ हैं। तो उस मालिक को आप कोई भी नाम दे दो, उसे किसी भी रूप में मान लो, वो अपने आप में न शरीर है, न मन है और न ही आत्मा है। लेकिन यह शरीर, मन और आत्मा उस परम पुरूष का ही है। कोटि कोटि ब्रह्माण्ड जो यह जो कुछ भी दिखाई देता है यह उस परमतत्व का शरीर है, इसी को विराट कहा गया है। इसी विराट को ज्योति निरंजन कहते हैं। ज्योति निरंजन क्या है? करोड़ों अरबों प्रकाश पुंज (गुरू नानकदेव जी उसे लख पताले–पताल कहते है) उस मालिक का स्थूल शरीर है। इसकी खोज में वैज्ञानिकों ने यह पता लगाया कि एक परमाणु के अन्दर भी गति है, चाल है लेकिन जो शक्ति उस परमाणु को चला रही है वही गति नक्षत्रों, सूर्यों और पृथ्वी को भी चला रही है, उसका जो केन्द्र है वह अपने आप में स्थिर है।

एक परमाणु के अन्दर सारे ब्रह्माण्ड का नक्सा मौजूद है। जो कुछ भी तुम परमाणु में देखते हो वही सारे जगत् में मौजूद है। यही बात मनुष्य की है। जो चीज मनुष्य के अन्दर है वही मालिक के अन्दर भी नजर आती है।

फर्क सिर्फ इतना है कि परमाणु एक छोटी इकाई है और जगत् बड़ी इकाई है। लेकिन शक्ति एक ही है। यही बात आत्मा और परमात्मा के संबंध में भी है, मनुष्य और परमतत्व के संबंध में भी है। मेरा प्यारा जो है वही परम दयाल है। मैं जो कह रहा हूं वह मैं नहीं कह रहा, परम दयाल जी ही कह रहे हैं।

वैज्ञानिक कहता है कि परमाणु के अन्दर इलैक्ट्रोन, प्रोटोन और न्यूट्रोन होते हैं। जब परमाणु का इन्डक्सन होता है, विस्फोट होता है तब उसके अन्दर से बहुत ऊर्जा निकलती है। दस परमाणु बमों से पूरी पृथ्वी को नष्ट किया जा सकता है। इसी तरह सूरज है, पृथ्वी है, ग्रह हैं और अनेकों सौर मंडल हैं इस जगत् के अन्दर जो चल रहे हैं। लेकिन यह जगत् जिस पर ठहरा हुआ है, वह शक्ति ठोस नहीं है, वो सूक्ष्म है। इसी तरह आपके शरीर के अन्दर भी सौर मंडल, आकाशगंगायें और पूरा ब्रह्माण्ड मौजूद है। यदि यह सब आपके अन्दर नहीं होते तो अभ्यास के समय आपके अनुभव में कैसे आते? जिस मालिक को तुम ढूंढने जा रहे हो वह तो तुम ही हो, वह ईश तुम ही हो। परम दयाल जी महाराज कहते थे कि तुम मेरे गुरू हो और मैं कहता हूं कि तुम मेरे गुरू के गुरू हो।

तो मैं आपको बता रहा था कि जो कुछ भी आकाश के अन्दर मौजूद है, जो कुछ भी मालिक का स्थूल रूप है, यह ब्रह्माण्ड है वह उसका स्थूल शरीर है। इस तरह से उसके अन्दर जो सौर मण्डल, आकाश गंगायें हैं उनको चलाने वाली शक्ति ठोस नहीं है। उनको चलाने वाली शक्ति मालिक का सूक्ष्म मन है, जिसे ब्रह्माण्डी मन कहते हैं, जिसे विष्णु कहते हैं। यह बात महाराज जी ने बताई कि वह जो विष्णु है वह दिखाई नहीं देता, वह निर्गुण है। लेकिन वह जो ब्रह्माण्डी मन है वह भी अपने आप में पूर्ण नहीं है। वह ब्रह्माण्डी मन एक और शक्ति पर आधारित है जो उसका कारण शरीर है जिसे जगत् की आत्मा कहते हैं। ये तीनों इस जगत् में रहते हैं लेकिन इनका जो आधार है, जो इन तीनों से न्यारा है और अविनाशी है, वह इस जगत् से बाहर है।

जब तक तुमको यह ज्ञान नहीं हो जाता कि तुम्हारा शरीर, तुम्हारा मन और तुम्हारी आत्मा शरीर होने के नाते चल रहे हैं, लेकिन इनको चलाने वाला एक जगह ठहरा हुआ है, तब तक तुम उस अविनाशी परमतत्व तक नहीं पहुंच सकते। अगर सान्नू यह पता लग जाये कि हम शरीर नहीं हैं, मन नहीं हैं और आत्मा भी नहीं हैं, हम तो उसी अविनाशी के अंश हैं और अविनाशी

ही हैं तो फिर रास्ता आसान हो जायेगा। शरीर अगर अस्वस्थ है, मन यदि चंचल है और आत्मा में अज्ञान है फिर भी तुम अपने आप में टिके हुए हो, अविचलित हो तो तुम उस परमतत्व के पास हो। दाता दयाल कहते हैं–

'मन बना विहंगम मीन मकर मरकट बन कर कूदा अंदर।
चींटी की चाल चला घट में कह उठा अगम उदासी है।।'

परमदयाल जी महाराज ने बताया कि तू शरीर नहीं है, मन भी नहीं है, आत्मा भी नहीं है, यह समझने की बात है। मन चंचल है तभी तो तुम दुखी हो और मैं कहता हूं कि संसार के अन्दर आनन्द ही आनन्द है। वैज्ञानिकों ने परमाणु के अन्दर जो केन्द्र है उसका हटाकर अणु बम बनाया। एक अणु के अन्दर लाखों परमाणु हैं। संत कहता है कि अरे! परमाणु की ऐसी की तैसी तुम अपने आप में अविनाशी हो।

'कोई अगुन कहे कोई सगुन कहे, कोई निराकार साकार कहे।
तू सब कुछ है और कुछ भी नहीं, धुरपद धाम निवासी है।।'

मेरे सत्गुरू ने मुझे बता दिया, मुझे दिखा दिया कि वह मालिक धुरपद धाम निवासी है। मालिक के अन्दर तो कोई कमी नहीं है। इसलिए दाता दयाल जी कहते हैं–

'तत्व अतत्व असार सार नहीं, सुरत शब्द नहीं होई।
सन्त कहें तुम शब्द रूप हो और अशब्द गति सोई।।'

कबीर साहब ने इस युग के अन्दर प्रकट होकर अपना ज्ञान और गूढ़ रहस्य केवल धर्मदास को दिया किसी साधु–सन्यासी को नहीं दिया, नाथों को भी नहीं दिया। उन्होंने यह ज्ञान एक ग्रहस्थी को दिया और साथ ही उसे यह चेतावनी भी दे ड़ाली–

'धर्मदास तुझे लाख दुहाई, सार भेद बाहर नहीं जाई।'

क्यों? क्योंकि इस भेद को जानने के लिए कोई अधिकारी ही नहीं था। उस समय मुसलमानों का शासन था। हालांकि उन्हें अपने लिए कोई परवाह नहीं थी। कबीर साहब को उस समय बंदी करके गंगा में फेंक दिया गया था, लेकिन वे सुरक्षित वापस आ गये थे। यह वो जमाना था जब शासन के विरद्ध कुछ भी बरदास्त नहीं किया जाता था। अंग्रेज ईसाई थे और ईसाई धर्म को मैं जानता हूं ईसाई अंधविश्वासी होते हैं और बहुत संकीर्ण प्रवृत्ति के होते हैं। वो समझते हैं कि जो आदमी ईसाई नहीं है, जो ईसा को नहीं मानता,

वो नरक में जायेगा और खुदा का बेटा स्वर्ग जायेगा। जब मैंने उनको बताया कि जब एक आम आदमी के 20–25 बेटे होते हैं तो खुदा के एक ही बेटा क्यों हुआ? मैं बड़ी खुली बातें करता था उनसे। वे कहते हैं कि यदि आप ईसाई नहीं हैं तो खुदा के पास नहीं जा सकते। कितना दकियानुसी विचार है, धर्म के बारे में उनका। अमेरिका वाले विज्ञान में चाहे कितने ही ऊँचें हों, उन्होंने भले ही ऐसी मिसाइल्स बना ली हैं जिन्हें वे जहां चाहे फेंक सकते हैं, लेकिन धर्म के बारे में उनकी सोच बहुत संकुचित है।

आपके अन्दर कितने भी अवगुण क्यों न हो अगर आप गुरू के प्रति कृतज्ञ हैं तो गुरू आपको बचा लेगा। मालिक अगर रूठ जाय तो गुरू उसे बचा लेता है अगर गुरू रूठ जाय तो उसको मालिक भी बचा नहीं सकता। इसलिए कहा है–

कामी तरे क्रोधी तर पापी तरे अनन्त।
आन उपासक कृत्घन तरे न नाम रटन्त।।

कामी भी तर जाता है। काम अपने आप में बुरा नहीं है। काम का मतलब है कि आपके अन्दर जो कामनायें हैं जो इच्छा है जो वासना है, वासना बुरी नहीं होती अच्छी भी होती है, तो जब काम प्रेम में बदल जाता है तब वो तर जाता है।

'काम काम सब कोई कहे काम न चीन्हे कोय।
जेती मन की कामना काम कहावे सोय।।'

इन कामनाओं को अगर मालिक की तरफ लगा दिया जाय तो यह आपके तरने का साधन बन जाती हैं। काम की शक्ति मालिक की शक्ति है जिधर लग गई उधर ही सफलता दिला देती है। जिसने बड़े–बड़े सतगुरू हुए हैं वे शुरू शुरू में बहत कामी थे। तुलसीदास बहुत कामी थे लेकिन बाद में परततत्व हो गये कि नहीं! जब काम की शक्ति मालिक की तरफ लग जाती है तो आपकी साथी बन जाती है।

परमदयाल जी कहते थे कि उनकी शादी जल्दी 13 वर्ष में हो गई थी इसलिए उनके अन्दर काम की शक्ति बहुत अधिक थी। लेकिन परम दयाल जी जैसा सन्त और परमतत्व कहीं मिलेगा! इसलिए काम बुरा नहीं है। अगर काम की दिशा बदल दी जाय तो वह प्रेम में बदल जाता है। और प्रेम ही आधार है सत्गुरू से मिलने का। सिमरन किस का करते हो, तुम

सिमरन उसी का करते हो जिसे तुम प्रेम करते हो। प्रेम कुछ और नहीं है, प्रेम जहां होता है वहां किसी और चीज की जरूरत नहीं होती।

साफ सी बात है मुझे बचपन से क्रोध नहीं आता था। कभी क्रोध आता भी तो सच्चाई के लिए, लोक कल्याण के लिए आता था। मैंने कई कालेजों में पढ़ाया तो विद्यार्थियों से लेकर वाइस चांसलर तक किसी से कभी मेरा विरोध नहीं हुआ। छात्र आप जानते हैं कैसे होते हैं, जिधर चल पड़े चल पड़े। जब 1962 में मैं डीन बना जब जगह–जगह पर कभी जय प्रकाश नारायण की जय कभी किसी की जय करते हुये प्रदर्शन हो रहे थे। तब किसी प्रोफेसर की हिम्मत नहीं हुई कि उन छात्रों को मना करे। जब मेरे साथ ऐसा हुआ तो मैंने कहा कि छात्रों तुम हनुमान जी की सेना हो, लेकिन मैं राम हूं। हनुमान जी राम को तो मानते हैं और राम का मतलब वो है जो सच्चाई पर चलता है। तुम्हें अगर कोई शिकायत हो, कुछ मांगना हो तो हडताल मत करो। मेरे पाय आ जाओ। अगर तुम्हारी मांग सच्ची है तो मैं उसे पूरी करा दूंगा। लेकिन मेरे साथ झूंठ कपट नहीं करना और वास्तव में ऐसा ही हुआ। मुझे कभी परेशान नहीं होना पड़ा,न तो उदयपुत में न रामपुर में।

उदयपुर में दो सरदार रहते थे एक था सक्तावत और दूसरा था डूंडावत। उन दोनों को महाराजा ने बुलाया और कहा कि देवगढ़ के किले को फतह करना है। तुम दोनों जाकर तैयारी करो और तुम दोनों में जो पहले किले के अन्दर जायगा उसके खानदानी को मैं सिपहसालार बना दूंगा। दोनों ने देवगढ़ में डेरा जमाया। काफी दिन तक वे वहां रहे। आखिर में जब वे तंग हो गये तो दरवाजा तोड़ने के लिए दरवाजे में लगी कीलें हाथी को मजबूर कर रही थीं तो उनमें से एक ने अपने आपको हाथी के आगे उन कीलों के सामने खड़ा कर दिया तो दूसरे ने देखा कि यह मुझसे पहले पंहुच जायगा तो उसने एक सिपाही से कहा कि मेरी गर्दन काटकर किले में फेंक दे। अब उसका सिर काट कर अंदर फेंक दिया गया। ऐसे होते हैं राजपूत लोग जो अपनी जान की भी परवाह नहीं करते। हालांकि मैं इस बहादुरी नहीं मानता। हमारे कालेज में भी ऐसे राजपूज लड़के थे जो पिस्तौल लेकर कालेज आते थे और रौब से बात करते थे।

जहां सच्चाई है जहां प्रेम है वहां डर नहीं होता। मुझे तो कभी उन छात्रों पर क्रोध करने का मौका ही नहीं मिला। अगर किसी को क्रोध बिलकुल

भी नहीं आता तो वह पूर्ण हो जाता है। लोग हैरान होते थे कि ये छात्र इतने शैतान है और आई. सी. शर्मा के आगे कैसे झुक जाते हैं। एक बार उदयपुर के पास गुजरात राज्य के अहमदाबाद शहर में छात्रों ने कुछ खुरापात की और वही खुरापात उदयपुर में भी चलने लगी। कुछ छात्र हमारे पास आये और कहने लगे कि हम कल सारे उदयपुर को बंद करवायेंगे। हमारे वाइस चांसलर जाट थे। जाट उलटी खोपड़ी वाला होता है। कहते हैं कि अनपढ़ जाट पढ़ा जैसा और पढ़ जाट खुदा जैसा।

वाइस चांसलर ने मुझे बुलाया और पूछा कि तुम्हें पता है क्या हो रहा है? मैंने कहा कि हां पता है, कल छात्र उदयपुर बंद करा रहे हैं और पुलिस का सामना करेंगे। उसने कहा क्या तुम इसे रोक सकते हो? मैंने कहा कि हां रोक सकता हूं। अपनी गाड़ी भेजो। मैं होस्टल गया छात्र वहां नहीं मिले। फिर मैं गेट पर गया और देखा कि एक तरफ छात्र खड़े हैं और दूसरी तरफ पुलिस खड़ी है और वातावरण पूरी तरह से तनावपूर्ण था। उनका जो लीडर था नाहरसिंह, मैंने उसे कहा नाहरसिंह इधर मेरे पास आओ। वह मुझे गुरू जी कहता था। मैंने कहा कि हम तुम्हारी मांगों पर बात करते हैं तुम बंद–वंद छोड़ो। उसने कहा कि आप चलो मैं आता हूं। हम वाइसचांसलर के घर आये। इधर हम छात्रों से बात कर रहे थे उधर पुलिस कमिस्नर और जिला अधिकारी को खतरा था कि बात कहीं बिगड़ न जाय। छात्र कहते थे कि हमारे साथियों को छोड़ दो जिन्हें पुलिस ने पकड़ा है और जेल में डाला हुआ था। कुछ छात्रों ने बसें वगैरहा जलाई थीं उन पर मुकदमें चल रहे थे।

बात करते–करते रात के 12 बज गये। जिला अधिकारी बिचारा घबरा गया। उसने कहा कि जिन छात्रों के खिलाफ बड़ा गुनाह किया है उन्हें मैं छोड़ नहीं सकता। मैंने छात्रों के सामने कहा कि मेरे छात्र ऐसे नहीं है। अगर किसी ने गुनाह किया है तो उसे सजा मिलनी चाहिए बाकी रही बात उनके मुकदमें वापस करने की तो मैंने कहा कि आप छात्रों को छोड़ दो मुकदमें भी वापस ले लेंगे। उसने कहा कि एक महीने में छोड़ देंगे, मैंने कहा कि एक नहीं दो महीने लो लेकिन उन्हें छोड़ने का वायदा करो। इस बात को छात्र भी मान गये। जब बाहर आये तो कुछ राजपूत लड़कों ने कहा कि यह समझौता किसने कराया तो मैंने कहा कि मैंने कराया है, फिर वे शान्त होकर चले गये।

कहने का मतलब यह है कि अगर आप सच्चे हैं और आपके अन्दर क्रोध नहीं है तो दूसरों पर आपका प्रभाव जरूर पड़ेगा, यह मेरा अनुभव है। तो मैं कह रहा था कि कामी भी तर जाता है, क्रोधी भी तर जाता है। मैं समझता हूं कि पाप जैसी कोई चीज नहीं है। कत्ल करना पाप है ना! लेकिन जब गुरू कहता है कि कत्ल कर दे तो वह पाप नहीं है। श्री कृष्ण ने अर्जुन को यही तो कहा था कि कत्ल कर दे अपने गुरू को भी, पितामह को भी और अन्य संबंधियों को भी क्योंकि वे आततायीयों का साथ दे रहे थे। जब तुम सब कुछ मालिक को सुपुर्द कर देते हो तो तुम्हें अभयदान मिल जाता है। आप दुनिया के अन्दर रहेंगे तो 420सी भी करनी पड़ेगी। अगर आप गुरू के सामने सच्चाई बयान कर देंगे तो आपको माफी मिल जायगी। पाप वो कर्म है जो जान बूझ कर किसी के खिलाफ मन में द्वेष रखकर किया जाता है लेकिन जो कर्म आप कर रहे हो अगर उसे गुरू को अर्पण कर देते हो तो आपको छूट मिल जायगी। जब आप गुरू को प्यार करोगे तो गुरू तो हर समय तुम्हारे अन्दर है तो आप आनउपासक नहीं हो। कहा है–

जब मैं था तब तू नहीं जब तू था मैं नाहिं।
प्रेम गली अति सांकरी ता में दो ना समाहिं।।

दो होते ही नहीं। जो प्रेमी होता है वह गुरू को अपने से दूसरा नहीं समझता। जैसा गुरू वैसा चेला, फिर वह आन उपासक नहीं रहा। जिसके अन्दर प्रेम है जो गुरू को अपने से अलग नहीं समझता, वही सच्चा गुरू का चेला है, वही गुरूमुख है। जब वह अपने मन की बात करता है और गुरू की बात नहीं मानता तो वह मनमुख बन जाता है, कृतघ्न बन जाता है। अगर किसी ने तुम्हारे ऊपर कोई अहसान किया है और तुम अहसान फरामोश हो जाते हो या उसके अहसान के बदले में उसे कष्ट देते हो तो तुम लाख उपाय कर लो आवागमन से नहीं छूट सकते। आपने जो आज गुरूपूजा की यह मेरे शरीर की पूजा नहीं है, यह आपके इष्ट की पूजा है। गुरू पूर्णिमा कल है, कल तुम्हारा प्रेम व्यापक हो जायगा।

राधास्वामी!

सत्संग परम संत हुजूर मानव दयाल जी महाराज

(मानवता मंदिर होशियारपुर–मासिक सत्संग)

गुरू मध्य आदि अनन्त अद्भुत, अमल अगम अगोचरम्।
विभ्र विरजपार अपार निर्गुन, सगुन सत्य विश्वेश्वरम्।।
जेहि मति लखे नहिं गति लखे, यह शुद्ध तत्व विचार है।
जो चरन कमल की ओट आया, भव से बेड़ा पार है।।
गुरू विष्णु मूरत शिव की सूरत, गुरू को ब्रह्मा जान तू।
गुरू ब्रह्म ह परब्रह्म हैं यह सोच समझ के मान तू।।
कर गुरू की संगत रात दिन, नर जनम अपना सुधार ले।
दे फेंक माया बोझ सिरसे, यम का सीस न भार ले।।
सीस दे तन मन को दे, गुरू भक्ति रतन अमोल ले।
राधास्वामी भेद बताया तुम को, हिये तराजू तोल ले।।

पहले आप समझो कि मध्य क्या है और आदि क्या है? आपका सांस अंदर आता है यह आदि है आपका सांस ठहरता है यह मध्य है और आप का सांस बाहर निकलता है यह अन्त या अनन्त है। सांस–सांस में आप गुरू के पास हैं चाहे किसी ने गुरू धारण किया हो या न किया हो, गुरू तो हमेशा उसके पास है। दाता दयाल जी परम दयाल जी को कह रहे हैं–

गुरू हैं तेरे पास फकीरवा, गुरू हैं तेरे पास।। टेक
त्याग भरम विचार मन का, छोड़ जग की आस।
आस कर एक गुरू चरन की, सब से होय निरास।। फकीरवा
तेरे मन में तेरे तन में, तेरे सांसों सांस।
गुरू बसें दिन रात प्यारे, धर चरन विश्वास।। फकीरवा
गुरू नहीं तीरथ बरत में, गुरू न योग अभ्यास।
ढूंढ अपने हृदय में नित, वहां उनका वास।। फकीरवा
करम में माया है व्यापी, धरम यम की फांस।
बन में अनबन देखी मन में, भरम था सन्यास।। फकीरवा
तेरी चिंता गुरू को होगी, क्यों है तुझको त्रास।
राधास्वामी चरन गह, अज्ञान का कर नास।। फकीरवा

तुम्हारा आरम्भ भी गुरू ने किया। तुम पैदा ही उसके लिए हुये हो, तुम जीवत भी उसी के लिए हो और अन्त में भी उसी अनन्त में चले जाओगे। अद्भुत क्या होता है? जिसको देखकर आदमी अनिश्चय में या अचम्भे में पड़ जाता है, जिसकी लीला समझने के लिए आदमी प्रयत्न भी करता है क्योंकि उसके प्रति आकर्षण भी होता है, प्रेम भी होता है और गर्व भी होता है, उसे नेति–नेति भी कहते हैं, उससे प्रेम करने की इच्छा भी होती है और डर भी लगता है, इसीलिए उसे अद्भुत कहा गया है। डर किस बात का? डर इस बात का होता है कि कहीं वह खो न जाय। इसीलिए कहते हैं कि 'भय बिन प्रीत न होई गोसांई।' उसके निकट आने को मन करता है और डर इस बात का रहता है कि गलती न हो जाय। हांलाकि दयाल सब गलतियों को माफ करता है।

वह आंख जरूर दिखाता है कि कहीं तुम्हारा सूक्ष्म अहंकार बीच में न आ जाय। वह आंख इसलिए दिखाता है क्योंकि उसे पता चल जाता है कि तुम्हारे अन्दर सूक्ष्म अहंकार आ रहा है लेकिन उसका आंख दिखाना उसका प्यार है। तुम उसके प्यार से बच नहीं सकते चाहे तुम कितनी भी भागने की कोशिश करो। उसकी अगम की धारा का प्यार अनन्त है। यह तुम्हारे पात्र पर निर्भर करता है कि तुम उसका कितना प्यार ले पाते हो। अगर तुम्हारा पात्र छोटा है तो कम लोगे और ज्याद है तो ज्यादा प्यार पा सकते हो।

इस बात को नहीं भूलना चाहिए कि सत्गुरू जब मनुष्य के रूप में आता है तो वह आम आदमियों की तरह रहता है, खाना भी खाता है, बीमार भी होता है लेकिन वह फिर भी अमल है उस पर किसी प्रकार का मल नहीं है। उसका चरित्र अमल है, उसका विचार पवित्र है, अमल है। इसलिए गुरू को समझो। अगर तुम्हें यह समझ में आ जाए कि गुरू अमल है तो तुम्हें कहीं और जाने की जरूरत नहीं है। वह तो ऐसा है अगर तुम उसे ऐसा मान लोगे तो तुम्हारा काम बन जायगा और अगर नहीं मानोगे तो गये काम से। इसलिए बेहतर तो यही है कि मन से उसे मान लो। 'मन्ने की गति कही न जाई।' वैसे भी मानने में तुम्हारा क्या जाता है? इसलिए तुम उसे मान लो। वास्तव में यह बात सही है कि गुरू से प्यार करने से, गुरू की बात को मान लेने से तुम तर जाओगे तो ठीक है यदि नहीं तो भी तुम्हारा जाता क्या है?

गुरू की अमलता को समझो। उसका हाथ लगाना हाथ लगाना नहीं है, उसका टच करना सिर्फ टच करना नहीं है, उसके अन्दर जो अगम की धारा बह रही है उस धारा को वह तुम्हारे अन्दर बहा देता है अपने स्पर्श मात्र से। इसलिए गुरू अलग–अलग लोगों को अलग–अलग सेवा देता है, सबको एक ही लाठी से नहीं हांकता, सबको एक ही नाम नहीं देता। हरेक के प्यार की पराकाष्ठा अलग–अलग है। प्यार की जो गहनता है हरेक के पास वह अलग अलग है। इसलिए सत्गुरू के दरबार में ईर्षा का कभी सवाल नहीं उठता। क्योंकि हरेक व्यक्ति को उसके प्रेम की धारा एक विशेष रूप में मिलती है। हरेक का नमूना अलग अलग है।

दाता दयाल जी कहते थे कि वो (दाता दयाल) जो रामकृष्ण और बुद्ध के बाद परमतत्वाधार के रूप में आये थे वो कहते हैं कि जितने भी सत्संगी हैं उतने ही प्रेम के नमूने हैं। वे कहते हैं कि जब भी मैं (दाता दयाल जी महाराज) इलाहाबाद जाता हूं तो श्री गोपाल नरायण राय के घर पर ठहरता हूं। उनकी पत्नी हांलांकि मुझसे (दाता दयाल जी से) छोटी है लेकिन वह मुझे बेटा कहती है और मैं भी उसे 'माई' कहता हूं। ऐसा प्रेम था उनका, यह है प्रेम की पराकाष्ठा। पता है श्री गोपाल नरायण राय जी कौन थे? वे हमारे शब्दानन्द जी के पिता जी थे।

हमारे शब्दानन्द जी की माता जी उमर में दाता दयाल जी से छोटी थी लेकिन वह उनसे कहती थी दयाल तू बड़ा नटखट है। वह उन्हें बच्चा मानती थी और वे भी उसे हमेशा 'माई' कहकर ही बुलाते थे। दाता दयाल ने उनको संबोधित करते हुए अनेक शब्द लिखे थे जो 'शिव शब्द सागर' में उपलब्ध हैं। इसी तरह हैदराबाद में भी एक औरत है जो मुझे कहती है कि वह मेरी भाभी है, तो मैं भी उसे भाभी कहता हूं। तो यह प्रेम का रिश्ता है, चाहे गुरू से कोई रिश्ता बना लो, तर जाओगे। गुरू का प्रेम मन से होता है, गुरू अमल, अगम, अगोचर होता है। उसका कोई आधार नहीं है, लेकिन उसके बिना चला नहीं जा सकता, बताया नहीं जा सकता। सच्चा प्यार जो होता है उसे जुबान से बताया नहीं जा सकता।

'विभ्र विरजपार अपार निर्गुन, सगुन सत्य विश्वेश्रम्।'

वह पार भी है, अपार भी है, निर्गुण भी है और सगुण भी है, व्यक्त भी है और अव्यक्त भी है। तुम उसे प्यार करते चलो, जो कुछ भी हो वो तुम्हें ऊपर

उठा लेगा।

'कर गुरू की संगत रात दिन, नर जनम अपना सुधार ले।
दे फेंक माया बोझ सिरसे, यम का सीस न भार ले।।'
'सीस दे तन मन को दे, गुरू भक्ति रतन अमोल ले।
राधास्वामी भेद बताया तुम को, हिये तराजू तोल ले।।'

यह राधास्वामी मत बहुत ऊँचा है। यह सनातन धर्म की आखरी सीढ़ी है, यह कोई अलग मत नहीं है। राधास्वामी मार्ग भक्ति मार्ग है लेकिन पराभक्ति मार्ग है। स्वामी जी ने जो भक्ति बताई उसके बारे में कहा जाता है–

'भक्ति बताई सबसे न्यारी, वेद कतेब न ताहि विचारी।'

वेदों में, उपनिषदों में, निगमों में, पुराणों में, भक्तिसूत्रों में जो भक्ति बताई गई है, यह भक्ति उन सबसे ऊँची है। यह नहीं कि यह भक्ति पहले मौजूद नहीं थी, थी तो लेकिन उसकी व्याख्या के विवेक के विचार से स्वामी जी ने ही की। विवेक ही मनुष्य को मनुष्य बताता है। दाता दयाल जी कहते हैं–

'मानुष वा को जानिए जा में विवेक विचार।'

'भक्ति बताई सबसे न्यारी', यह भक्ति बड़ी न्यारी है, बड़ी अद्भुत है। इसको समझने के लिए शरीर को भी भूल जाओ, बाकी सब कुछ भी भूल जाओ, बस केवल अपने इष्ट देव को, गुरू को याद रखो। गुरू की जो रेडियेशन मिलती है, गुरू की जब कृपा होती है उसका कोई वार–पार नहीं हैं। यहां पर गुरू को केवल मनुष्य नहीं माना जाता। यहां पर गुरू वह नहीं है जिसने लीलाऐं कीं, लेकिन यदि तुम उसे परमतत्व मानकर, शुद्धतत्व मानकर चलोगे और उसके शरीर को भी परमतत्व मानोगे तब तुम ऊपर जा सकोगे। यह बात हालांकि सैन–बैन के अन्दर गीता में भी मौजूद है और भगवान कृष्ण ने स्वयं कहा है–

'यो यो याम् याम् तनुं भक्तः' 7.21

जो जो सकामी भक्त जिस जिस स्वरूप को श्रद्धा से पूजना चाहता है उसे उस भक्त की मैं उस ही देवता के प्रति श्रद्धा को स्थिर करता हूं।

'ये यथा माम् प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्। 4.11
जो मेरे को जैसे भजते हैं मैं भी उनको वैसे ही भजता हूं।
जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरत देखी तिन तैसी।

विचार तो वही है, लेकिन यहां अन्दर की बात कही गई है। जब

मैंने परमदयाल जी महाराज को देखा तो सोचा कि यह दाढ़ी वाला बूढ़ा तो वही है। अगर तुम खुदा को देखना चाहते हो तो परमदयाल जी का रूप देख लो। मैं सही कह रहा हूं मुझे तो उन्हें साक्षात् देखकर तनिक भी संदेह नहीं रहा कि वो परमतत्व के अवतार नहीं थे। उनके अन्दर अगाध प्रेम था, आन्तरिक प्रेम था और मैं समझता हूं कि उसी दिन महाराज जी ने मेरा उत्थान कर दिया था। आंखों आंखों में इशरे हो गये और मुझे निहाल कर दिया था। यह मैं प्रेम की और भक्ति की मिसाल दे रहा हूं। 'भक्ति सुनाई सबसे न्यारी, वेद कतेब न ताही विचारी।' तुम गुरू से प्रेम करके दो देखो, अगर तुम्हें लाभ नहीं मिले तो फिर मेरे पास आना। तुम प्रेम करो और बदले में प्रेम का अनुभव करो। इसलिए कहा है–

'सुरत शब्द दोऊ अनुभव रूपा, तू तो पड़ा भरम के कूपा।'

जो कानों में उंगली देकर बैठे रहते हैं और सोचते हैं कि साधना में उन्हें कुछ दिखाई देगा, मेरा अनुभव है कि जब तक कोई गुरू से या अपने इष्ट से सच्चा प्रेम नहीं करता उसे अन्दर में कुछ भी नजर नहीं आयेगा। अनुभव क्या है? सुरत का शब्द से सच्चा प्रेम हो जाना। जब अनुभव हो गया फिर कानों में उंगली देने की भी जरूरत नहीं है।

तो स्वामी जी महाराज ने ऐसी भक्ति बताई, ऐसा प्यार बताया। यह सारा जगत् जो है शब्दमय है। आप नंगे पांव इस फर्स पर चलिए अगर आपको शब्द सुनाई न दे तब कहिए। सारा जगत् शब्दमय है तो आप शब्द को कहां नहीं पाओगे, सभी जगह शब्द मौजूद है।

'कलि केवल एक नाम अधारा' वो नाम कौन सा है? मेरे मालिक के नाम का शब्द, मरे प्रीतम का शब्द और जब उस नाम के शब्द को मैं बार–बार लेता हूं तो ऐसा लगता है कि मेरे अन्दर वो स्वयं झंकृत हो रहा है।

'रोम रोम रग रग मेरी बोली। राधास्वामी राधास्वामी घुंडी खोली।'

जब प्रेम है तो प्रीतम का नाम लेने से सारे शरीर में कम्पन्न हो रहा है, सारे शरीर में रोमांच हो रहा है, ऐसा असर करता है प्रीतम का नाम। 'रोम रोम रग रग मेरी बोली' क्या बोली! राधास्वामी राधास्वामी बोली। फिर क्या हुआ? राधास्वामी ने मेरे सत्गुरू राधास्वामी ने मेरे ज्ञान में मेरे अनुभव में जो गांठ थी वो गांठ खोल दी और मुझे पता लग गया कि 'मैं वही हूं। यह प्रेम की पराकाष्ठा है। राधास्वामी ने राधास्वामी की गांठ को खोल दिया और राधास्वामी

ही बना दिया। पहले भी एक थे, बीच में अलग हुये थे और प्रेम की तड़फ से फिर एक हो गये। क्योंकि वह मालिक अपने आप में न सुरत है न शब्द है, न निर्गुण है न सगुण है।

'जेही मति लखे नहीं गति लखे वह शुद्ध तत्व विचार है।'

मैं आपको इसके अन्दर जो एक सूक्ष्मता है उसको साफ–साफ बताना चाहता हूं। गुरू 'शुद्ध तत्व विचार है'। यदि किसी गुरू को न शुद्ध का पता है न विचार का पता है तो बिचारा सत्संगी भी क्या करेगा! इसलिए जब तक जीवित जाग्रत सत्गुरू जो शुद्ध तत्व विचार वाला नहीं है तब तक कोई फायदा नहीं है उसका। हमारी कोई मति, हमारा कोई विचार उस तक नहीं पहुंच सकता लेकिन वह है जरूर। अगर तुम प्रेम को व्यक्त करना चाहो तो क्या तुम बता सकते हो कि प्रेम के अन्दर तुम्हें क्या अनुभव होता है? जब प्रेम करोगे तब उसे अनुभव करोगे, जब तक प्रेम नहीं किया तब तक तुम्हें पता नहीं लग सकता कि प्रेम में कैसा अनुभव होता है। यही बात मीरा ने भी कही है–

'ना मैं जानूं मारूति नन्दन ना पूजा की रीति।
मैं तो प्रेम दीवानी दर्द दीवानी, मेरा दर्द न जाने कोय।
घायल की गति घायल जाने, और न जाने कोय।।'

यह जो प्रेम की हालत है उसे ब्यान नहीं किया जा सकता। इसका मतलब यह नहीं कि वह है नहीं, वो तो इतना व्यापक है कि हमारी भाषा, हमारी जुबान वहां तक पंहुच नहीं सकती, हां उसका अनुभव जरूर कर सकती है।

'जेही मति लखे नहीं गति लखे' गति का मतलब है चाल, मन की चाल, बुद्धि की चाल वहां तक पहुंच नहीं सकती क्योंकि वह तो शुद्धतत्व विचार है। वो गुरू क्या है? वह मन नहीं है, वह बुद्धि नहीं है वह तो शुद्ध परमतत्व है। उसके शरीर को परमतत्व का स्वरूप मानो और वो जो शुद्धतत्व है वह अपने आप में इतनी पवित्र पावन वस्तु है कि जिसको कोई नाम नहीं दिया जा सकता लेकिन वह है जरूर। जब अनुभव हो गया कि तेरी हस्ती पाक पवित्र है, जात मात्र है तो मुझे तुम्हारे शरीर से क्या मतलब! तुम्हारा शरीर कैसा भी क्यों न हो, तुम्हारा रंग रूप कैसा भी क्यों न हो, तुम्हारा मन कैसा भी क्यों न हो मुझे उससे मतलब नहीं। मुझे तो उससे मतलब है जो

अविनाशी तत्व तुम्हारे अन्दर भी है और मेरे अन्दर भी है। तब मेरा प्यार जो है बिना शर्त का प्यार बन जाता है। जब उस प्रेम में कोई शर्त नहीं होगी, चाहे वह कानी हो, गूंगी हो तब वह शुद्ध प्यार होता है। फिर उसका किसी से विरोध नहीं होगा। वही शुद्ध तत्व अविनाशी जो है उसे मैं आपके अन्दर जगाने की कोशिश कर रहा हूं।

अब मुझे अनुभव हो रहा है कि मेरे अपने अन्दर और आपके अन्दर जो सम्पर्क सूत्र है वो ऐसी सच्चाई है, ऐसा सत् है जहां शरीर और मन का भेद नहीं है। वहां पहुंच कर 'मैं' 'मैं' नहीं रहता जगत् जगत् नहीं रहता, सब एक हो जाते हैं। जब सब एक ही है तो मैं फिर किससे नफरत करूं, किस पर क्रोध करूं अपने आप से! यही है शुद्धतत्व विचार।

फिर जब आपको यह अनुभव हो जायेगा कि वो आई0 सी0 शर्मा नहीं, वो अंगूठी वाला सन्त नहीं अरे! वो तो सर्वव्यापक है, मेरे अन्दर भी है और उसके अन्दर भी है तब आपके अन्दर किसी के प्रति भी ईर्षा नहीं हो सकती, किसी के प्रति क्रोध नहीं हो सकता क्योंकि फिर आप सबके अन्दर उसी अविनाशी तत्व को देखने लग जाओगे। कोई नहीं चाहता कि कोई किसी की पत्नी को या किसी के पति को प्यार करे लेकिन एक गुरूमुख शिष्य यह हमेशा चाहता है कि सभी उसके गुरू को प्यार करें। ऐसा विचार ही शुद्धतत्व विचार है।

'जो चरन शरन की ओट आया, भव से बेड़ा पार है।'

जब आपको सच्चे प्रेम का पता चल गया तब अपने सब हथियार फेंक दो, अपना अहंकार छोड़ दो उसके बाद आपके अन्दर जबरदस्त ताकत आ जायेगी। अब आगे की जिम्मेदारी गुरू स्वयं संभाल लेगा, मालिक स्वयं संभाल लेगा अर्थात् तुम उस जिम्मदारी से बच गये। अरे! वो आया ही इसलिए है, वो निर्बंध होते हुए भी बंधन में फंसने के लिए आया है ताकि तुमसे प्रेम कर सके और अपने प्रेम में तुम्हें फंसाकर तुम्हें बंधन से मुक्त करा सके। यह शुद्ध तत्व विचार है, यह पराभक्ति है, यह सच्चा प्यार है।

आज मैंने आपको गुरू के रूप के बारे में बताया। आज मैंने आपको थोड़ी सी खुराक दी है। मैंने जो कलाकन्द बनाई उसका एक नमूना आपको आज खिलाया। आज आपने नमूना थोड़ा सा खाया है, असली कलाकन्द क्या है यह कल आपको बताया जायेगा। सबको राधास्वामी!

सत्संग परम संत मानव दयाल जी महाराज
मानवता मंदिर होशियारपुर

किस मुख से तेरी महिमा गाऊँ, तू सत्त पुरूष अविनासी है।
चेतन घन अमल विमल निर्मल, सत सदन परम सुखरासी है।।
कोई अगुन कहे कोई सगुन कहे, कोई निराकार साकार कहे।
तू सब कुछ है और कुछ भी नहीं, धुरपद धुरधाम निवासी है।।
नहीं मन ने थाह कभी पाई, नहीं बुद्धि में आई चतुराई।
चित चिंतन कैसे करे तेरा, तू द्वैत अद्वैत प्रकाशी है।।
मन बना बिहंगम मीन मकर, मरकट बनकर कूदा अन्दर।
चींटी की चाल चला घट में, कह उठा तू अगम उदासी है।।
राधास्वामी रूप में प्रकट हुआ, दर्शन देकर कृतार्थ किया।
निज शब्द से अपना भेद दिया, घट अघट का सत्य निवासी है।।
परमतत्वस्य अवतारं परम पूज्यं सत्संगिनाम्।
मानवस्य परमइष्टं फकीरं वंदे जगत गुरूम्।।
राधास्वामी!

पुरानी और नई टेस्टामेंट के अन्दर सारी बाइबिल में यह नहीं लिखा है कि आत्मा क्या है? हालांकि उसमें इशारा जरूर है वे कहते हैं कि उसका कोई नाम नहीं है, ईश्वर का कोई नाम नहीं है। उसमें सब कहानियां ही कहानियां लिखी गई हैं। उन्हीं कहानियों में से एक कहानी में लिखा है कि एक मूसा था, मूसा उनका पैगम्बर था। मूसा कौन था? वास्तव में कहते हैं कि वो मिश्र की महारानी का नाजायज लड़का था जिसको उन्होंने नदी में फेंक दिया था। फिर वह एक अन्य यहुदी परिवार में पाला गया। मिश्र में भी राजा को राम कहा जाता था। अब जब वो मिश्र के अन्दर पला तो जो उसकी मां थी वह यहूदी थी। इसलिए मूसा ने भी अपने आपको यहूदी कहा। लेकिन मिश्र वाले अपने आपको यहूदी नहीं कहते। यहूदी कौन होते हैं? यहूदी वो होते हैं जिन्होंने योग धर्म चलाया। उस किताब के अन्दर एक कहानी लिखी है जो इस प्रकार है।

महाभारत के बाद जब श्रीकृष्ण गान्धारी से मिलने गए तब गान्धारी ने श्रीकृष्ण को श्राप दिया था। उसके मन की शक्ति बहुत ऊँची थी। जब युद्ध

में दुर्योधन अकेला पड़ गया तो उसे बताया गया कि यदि वह नंगा होकर अपनी मां के सामने जाय और उसकी मां उसके शरीर पर दृष्टि डाले तो उसका शरीर व्रज का हो जाएगा। जब वह रात में अपनी मां के कक्ष की ओर जा रहा था तो तो रास्ते में कृष्ण मिल गये और पूछा कि रात में नंगा होकर कहां जा रहा है तो उसने सब बात बता दी। कृष्ण ने कहा कि तू दूध पीता बच्चा नहीं है जो नंगा होकर अपनी मां के पास जा रहा है। अरे! यह ले मेरा दुपट्टा कम से कम अपने जननांग पर तो इसे लपेट ले। जब वह अपनी मां के पास पहुंचा और बोला कि मां अपनी आंखों की पट्टी खोलो और मेरे शरीर पर अपनी दृष्टि डाल ताकि मेरा शरीर व्रज का हो जाए और मुझे कोई युद्ध में मार न सके। जब उसकी मां ने पट्टी खोलकर अपनी दृष्टि उसके शरीर पर डालनी शुरू की तो उसका सारा शरीर व्रज का हो गया लेकिन वह हिस्सा कच्चा रह गया जिस पर वह दुपट्टा बंधा था। जब गांधारी ने पूछा कि बेटे यह तू ने क्या किया, यहां पर कपड़ा क्यों लपेटा? तो उसने कहा कि रास्ते में कृष्ण मिले थे और उन्होंने कहा था कि इतना बड़ा होकर अपनी मां के सामने नंगा जायेगा तुझे शर्म आनी चाहिए और उन्होंने ही अपना यह दुपट्टा मुझे लपेटने के लिए दिया था। जब युद्ध समाप्त होने के बाद श्रीकृष्ण गांधारी के पास गये तब गांधारी ने उन्हे श्राप दिया कि जैसे तूने मेरा परिवार आपस में लड़वा कर मरवाया है कृष्ण तेरा परिवार भी इसी तरह आपस में लड़कर मर जायेगा। श्रीकृष्ण ने उस श्राप को स्वीकार करते हुए कहा कि माताश्री यह अवश्य ही पूरा होगा।

इस तरह यादव आपस में लड़कर मर गये। उनमें से कुछ यादव स्त्री–पुरूष पश्चिम में चली गए और अरब देशों में जाकर बस गये। वही यादव यहुदी कहलाये। जिसने मूसा का पालन किया वह भी यहूदी था और जिस जगह पर वे बसे उस जगह का नाम उन्होंने फिलिस्तीन रखा। वहां एक और कहानी आती है कि एक क्राइस्ट था जो तीन–चार हजार वर्ष पहले पैदा हुआ था। वहां कैथल के पास कोई जगह है जहां वह पैदा हुआ था। वहां के एक परिवार के मुखिया के 16 हजार लड़कियां थीं। अब देखिये यही बात दाता दयाल जी ने भी अपनी एक किताब में लिख कर यह सिद्ध किया है कि सारी दुनिया असल और नकल में हिन्दु है।

यह यहुदी जो था जब उसे पता लगा कि उसके पूर्वज भारत के यादव वंश के थे तो वो वहां से निकल गया और जाकर एक पर्वत के ऊपर जाकर समाधि लगाई। बाईबिल की कहानी कहती है कि जब वो समाधि लगा रहा था तो उसे एक महान प्रकाश दिखाई दिया जिससे उसकी आंखे चुंधिया गईं। उसके बाद उसे आवाज आई कि जूते उतार दे, यह पवित्र भूमि है। जब उसने जूते उतारे तो खुदा ने उसे कहा कि ऐ मूसा! मिश्र जा और जो मेरे बन्दे हैं उन्हें ले आ। जब मूसा ने पूछा कि मैं उन्हें क्या कहूँ? जब वे मुझसे पूछेंगे कि खुदा का नाम क्या है तो मैं उन्हें क्या कहूँ? उसने सोचा था कि खुदा उसे यह कहेगा कि मेरी यह पहचान है, मैं ऐसा हूं या वैसा हूं मैं एहलाम हूं। एहलाम उनका पहला पैगम्बर था। लेकिन खुदा ने जवाब दिया 'यावेद' 'I am that' मैं वो हूं जो हूं।

यह 'सोऽहम्' का अनुवाद है अर्थात् मैं वो हूं जो हूं। खुदा ने उससे कहा कि उनको कह दो कि उन्हें 'सोऽहम्' ने बुलाया है। वो सोऽहम् क्या है? जो सबके अन्दर है तुम्हारे अन्दर भी है और मेरे अन्दर भी है। 'तत्व असार सार नहीं' यह इशारों के द्वारा अन्दर समझने की बात है। उसी बात को बिचारे जिसस क्राइस्ट ने अपने लोगों को बताया। जिसस क्राइस्ट का 6 साल से 11 साल का इतिहास नहीं मिलता। अब नई टेस्टामेंट में यह बाद सामने आई है कि इस अवधि में जिसस क्राइस्ट भारत आया था और यहां आकर योग साधना की थी जिससे उसे सिद्धि–शक्ति प्राप्त हो गई। योग साधना के बाद सिद्धि–शक्ति आती ही है। जैसे आप लोग कहते हैं कि परमदयाल जी प्रकट हुए और उन्होंने आपकी मदद की लेकिन परमदयाल जी कहते थे कि वे नहीं गए। वास्तव में परमतत्व अपने आप में कभी प्रकट नहीं होता लेकिन आपकी साधना प्रेम और विश्वास से उसे अनुभव किया जा सकता है।

सत्गुरू को चाहे आप परमतत्व मानो, चाहे बाप मानो, चाहे मित्र मानो या शत्रु मानो मैं चेलेन्ज के साथ कहता हूं कि आप उसका विरोध करो, उससे शत्रुता करो, उसकी निन्दा करो, उसकी बदनामी करो फिर भी वह तुम्हें तार देगा। मुझे महाराज जी ने कहा था कि शर्मा! तुझे इस बात का पता बाद में चलेगा जब तू मेरा यह महान कार्य करने लग जायेगा, तब तुझे पता चलेगा कि गुरू के अन्दर कितनी ताकत होती है। मैं बताना चाह रहा हूं कि जब परमतत्व जिसस क्राइस्ट के रूप में आया तब उसने बहुत से लोगों की

बीमारी ठीक की। यह मामूली बात होती है, अगर कोई इस सिद्धि–शक्ति के चक्कर में फंस गया तो उसकी आगे की उन्नति रूक जाती है। फिर वह वहां तक नहीं पंहुच सकता जिसे कहा है 'तू धुरपद धाम निवासी है।'

मुझे याद आता है जब 1988 में मैं यहां से गया था तो अमेरिका में एक ऐसा सम्मलेन हुआ जहां पर दुनिया के माने हुए लोग जो मनोवैज्ञानिक थे और मन के विज्ञान को जानते थे उन्होंने दुनिया के माने हुए कमप्यूटर लगाए हुए थे। एक मनोवैज्ञानिक ने बताया कि उसका कमप्यूटर बायोरिज्म बताता है अर्थात् आपके अन्दर शरीर की एक धार चल रही है, एक मन की धार चल रही है और एक आत्मा की धारा चल रही है। उसने ऐसा प्रोगाम उसमें डाला हुआ था जो बताता था कि हर आदमी के अन्दर एक वक्त ऐसा आता है कि जब उसके शरीर की और मन की धार नीचे हो जाती है, उस समय उस पर मुसीबत आ सकती है, उस समय उसका एक्सीडेन्ट भी हो सकता है। यह बड़े गजब की मशीन बनाई थी उसने। आप अपना जन्म दिन उस मशीन में डालिए तो फौरन आपके जीवन का नक्सा सामने आ जायेगा कि फलां तारीख को आपकी आत्मा की धार नीचे को गिर जायेगी और उसके आधार पर उसने अनेक भविष्यवाणियां भी की थीं जो सच निकली थीं।

जब मैं वहां पंहुचा तो वहां एक और आदमी था जो दूसरों के मन की बात बता देता था कि भविष्य में क्या होने वाला है। एक तीसरा आदमी था जो ज्योतिषशास्त्र का ज्ञाता था। उसने यह बताया कि पृथ्वी पर जो उडन–तस्तरियां आती हैं वे दूसरे लोकों से आती हैं। तो वो जो वैज्ञानिक था उसे किसी ने कहा कि तू यह खोज कर बता कि मन क्या चीज होती है। उसने खोज कर पता लगाया कि दूसरे लोकों में लोग मन से बातें करते हैं वहां उर्म भी लम्बी होती है। बाद में उसने मुझसे कहा कि मैं उसे समाधि लगाना सिखाऊँ, ताकि वह उन लोगों से बात कर सके। ये बड़े दिग्गज जो दूसरों की बात बताते थे मेरे पास समाधि–ध्यान सीखने की बात करते थे।

वहां अमेरिका में हम ग्रुप मेडीटेशन करते थे क्योंकि वे लोग चाहते थे कि उन सबको एक सा अनुभव हो जाए। ग्रीव्ज में दो बुढ़िया थीं, पैसे वाली थीं। मैंने उनकी समाधि लगवा दी और दस मिनट बाद जब उनके सिर पर हाथ रखा तो वो बोलीं कि बड़ा मजा आया। जब यह बात मैंने महाराज जी को पत्र में लिखकर बताई (यह बात मैं अहंकार वश नहीं कह रहा) तो उनका

उत्तर आया कि ज्ञान के अवतार तो दाता दयाल जी महाराज थे और अब वही धार मानव दयाल में बह रही है।

मैं आपको बता रहा था कि शरीर से परे, मन से परे, जो इनका आधार आत्मा है उसके अनुभव भी उसी के कारण होते हैं, लेकिन यह अनुभव होने पर भी समाधि में शब्द में विलीन होने पर भी आपको अपने उस चौथे पद का अनुभव नहीं हुआ जो अविनाशी पद है। इसीलिए उसको बार–बार कहा जा रहा है कि वो कुछ नहीं है।

'कोई अगुन कहे कोई सगुण कहे, कोई निराकार साकार कहे।
तू सब कुछ है और कुछ भी नहीं, धुरपद धाम निवासी है।।

इसलिए कहा गया है 'सुरत शब्द दोऊ अनुभव रूपा। तू तो पड़ा भरम के कूपा।।' जो अनुभव मुझे मेरे परमदयाल जी महाराज ने कराया उसके आधार पर कहता हूं कि वो शरीर से भी खुदा थे, मन से भी खुदा थे और आत्मा से भी खुदा थे। दाता दयाल जी महाराज परम दयाल जी महाराज के बारे में लिख रहे हैं–

कौन है सादां फकत, सादां जहां जाते फकीर।
खुश नहीं हरगिज तवंगर मालोजर वाले फकीर।।
तर्के दुनिया तर्के उकवा, तर्के मौला कर दिया।
तर्क का भी तर्क हे, अब तर्क सं भी दिल भर गया।।
चश्मे वहादत भी मिली, वहदत का मंजर देखकर,
कर रहा हूं रात दिन, दुनिया की मंजिल का सफर।।
आबदो माबूदियत माबूद से आजाद है।
'खुश मुजस्सम जिस्म से रूह से अहदो साद है।
खाक में दुनिया मिली, ओर खााक ही हे वो मुदाम।
वह खुशी से सादमां रहता है हर सुबहो शाम।।
क्या ये दुनिया ख्वाब हे और ख्वाबबीं जाते–फकीर।
दामो हिरसो मालोजर में, वो नहीं हरगिज अजीज।।
जिसको देखो इस तरह वही समझो सच्चा फकीर।
दस्तगीरे दो जहां और दो जहां का है वो पीर।।
आया जो कुछ भी समझ में तेरे लिए लिख दिया।
तू ने फैलाया था दामन आज वो भी भर दिया।।

जात में अपनी हुआ गुम तुम भी गुम होना कभी।
मंजिले मकसूद पर पहुंचोगे सुन लो यह अभी।।

मैंने महाराज जी से 1968 में यह पूछा कि महाराज जी अब जो आपकी अवस्था है उसे कैसे ब्यान करोगे, अब आपका मालिक के साथ क्या कारोबार है तो वो मुझे कहने लगे कि भाई देखो! जब पानी का बुलबुला फूटता है तो वह पानी में ही मिल जाता है लेकिन फटने और मिलने से पहले थोड़ा वक्त लगता है, बस वही अवस्था मेरी है। यही अंतिम अवस्था है, यही उनमुनी अवस्था है। मैं सच कहता हूं आज तक किसी अवतार ने, किसी पैगम्बर ने, किसी सन्त ने इससे पहले इस तरह की व्याख्या उस अवस्था की नहीं की।

कबीर साहब कहते हैं 'कह कबीर यह उनमुनी रहनी सो प्रकट कर गाई। क्या गाई? यही कि वह परमतत्व वह सत्गुरू कण–कण में ऐसा रमा हुआ है कि चौबिसों घन्टे उसी का रूप गाया जा रहा है, 'गाने' का यह मतलब है। जब आप इस अवस्था में आओगे तब आपको भी इसका अनुभव हो जाएगा। स्वामी जी महाराज ने भी ऐसा ही कहा है–

'राधास्वामी गाय कर जनम सुफल कर ले।
यही नाम निज नाम है, चित अपने धर ले।।'

राधास्वामी नाम को गाने का मतलब है–सुमिरन ध्यान करना। जो सत्गुरू तुम्हारा इष्ट है जैसे वह रहता है वैसे ही तुम भी रहना शुरू कर दो। वो हर समय तुम्हारे अन्दर मौजूद है, तुम उसे अपने से दूर मत समझो। यह उनमुनी हालत गुरू की कृपा से मिलती है। जब यह मिल जाती है तब तुम्हें अभ्यास करने की भी जरूरत नहीं है। पहले अभ्यास की जरूरत इसलिए होती है कि अभ्यास से मन टिक जाए। जब मन टिक जाता है तब ऐसी हालत होती है, तब तुम उसके साथ एक हो जाते हो, एक क्या! तुम वही हो जाते हो, फिर मैं और तुम का भी पता नहीं चलता।

पहले तो महाराज जी मुझे कहते थे कि मानव दयाल तू यह कर ले, वह कर ले, तुझे मेरा काम करना है। जब मैंने परसराम जी से कहा कि अभी तो बच्चे पढ़ रहे हैं, अभी तो मुझे दुनिया के काम हैं। यह बात परसराम जी ने महाराज जी को जाकर कह दी कि महाराज जी आई0 सी0 शर्मा तो यह कह रहा है कि वह आपका काम नहीं करेगा। तो महाराज जी मुझ पर नाराज हो गये और कहने लगे कि क्या तूने ऐसा कहा? यदि तू मेरा काम नहीं

करेगा तो क्या मेरा काम नहीं होगा, मेरा काम तो तेरे बिना भी होगा, मानव दयाल! मैंने कहा कि महाराज जी मैंने ऐसा नहीं कहा, तब वे आश्वस्त हो गये। बाद में अपने अन्तिम दौरे पर वे कहते हैं कि मैं अमेरिका आप लोगों के लिए नहीं आया हूं। मैं तो अपने मानव के लिए आया हूं। यह तुम्हें सन्तमत का रहस्य सनातन धर्म की पुस्तकों के आधार पर बतायेगा।

हां तो मैं कह रहा था कि जब मैं उस उनमुनी रहनी की अवस्था में पढ़ाता था तब कभी रजिस्टर ले जाता था कभी भूल जाता था, तब दूसरे प्रोफेसर कहते थे कि यह शर्मा शराब पीकर आता है। एक तरह से वे ठीक ही कहते थे क्योंकि मैं मस्ती की शराब पिये होता था। महाराज जी ने मुझे अन्त में कहा कि मानव! तेरी उनमुनी हालत है जिसमें तू नहीं है और मैं भी नहीं है लेकिन तेरी वो हालत भी आयेगी जब तेरे अन्दर तू और मैं दोनो खत्म हो जांयेगे। लेकिन तेरी यह हालत तब आयेगी जब तू मेरे सत्संगियों की महान सेवा का काम करेगा।

'सुख दुख से एक परे परमसुख, सो सुख रहा समाई।'

मैं यही समझाने का प्रयास कर रहा हूं कि मुझे क्या मिला और आपको क्या मिलेगा? 'धुरपर धुरधाम निवासी है', तुम्हारे अन्दर वो है, जरा दृष्टि बदलनी है। जब तुम स्टेशन पर आते हो तो स्टेशन पर एक गाड़ी आती है उसके बाद दूसरी आती है, तो जो दूसरी गाड़ी आती है वह आती तो बाद में है लेकिन पहले वाली से पहले चलती है। महाराज जी स्टेशन मास्टर थे न! मैं बता रहा था कि जब महाराज जी मेरे पास परसराम जी के साथ आये थे उस समय भी मेरी ऐसी हालत थी लेकिन कुछ कम थी। जो काम मैं पहले आराम से कर रहा था, वह करना भूल गया। मैं कोई अभिमान से नहीं कह रहा, खुद के अनुभव से कह रहा हूं।

जब तुम अपने डिब्बे में बैठे हुए होते हो और बाहर देखते हो तो ऐसा लगता है कि आपकी गाड़ी चल रही है लेकिन जब आप अपने डिब्बे में देखते हो तो पता चलता है कि यह तो दूसरी गाड़ी चल रही है। इतनी सी बात है कि धुरपद तुम्हारे अन्दर है तुम उसको बाहर ढूंढ रहे हो। जब आप बाहर देखोगे तब आपको लगेगा कि आप चल रहे हो। जब आप अन्दर देखोगे तो आपको अनुभव होगा कि आपका शरीर चल रहा है, आपका मन चल रहा है, तुम्हारी आत्मा आनन्द में है, लेकिन तुम इनसे परे हो। तुम बस अपने अन्दर

दृष्टि डालो, वो हर समय तुम्हारे अन्दर ही मौजूद रहता है। अरे! वह तो तुम स्वयं ही हो। जब यह बात होती है तो तुम धुरपद धुरधाम निवासी हो जाते हो।

उसकी हो जुस्तजू क्या, जो अपने रूबरू है।
यह जुस्तजू नहीं है, तौहीने जुस्तजू है।
अंधे बने हैं आबिद, आंखें नहीं हैं खुलती।
क्या ढूंढते हैं उसको, जो अपने दूबदू है।।
दायें है अपने बायें, इसजा है और उसजा।
आंखे खुली तो देखा, वह अपने चारसू है।।
क्या खीलो खाल में है, क्या फरजी हाल में है।
जो है जुबां पै बैठा, क्या उसकी गुफ्तगु है।।
दिलदार और दिलबर, दिलकश है दिलरूबा है।
खुरशीद रू अगर है, वह मेरा माहरू है।।
वह दिल में खुद है कायम, दिल घर है जिसका दायम।
दिल को संभल के देखा, वह दिल में मूबमू है।।
राधास्वामी की मेहर से, कर शग्ल जिक्र सुल्तां।
पहुंचेगा अपने मसकिन, जहां तेरी जुस्तजू है।।

जुस्तजू का मतलब है दौड़ना, भागना, ढूंढना। हरेक आदमी के अन्दर जुस्तजू है, वो ढूंढता है कि मालिक उसे कहां मिलेगा? वह मालिक को बाहर ढूंढता है जबकि 'नाम रहे चौथे पद मांहीं, वह ढूंढे त्रिलोकी मांही।' तुम उसे संसार में ढूंढ रहे हो। जिसे तुम बहुत प्यार करते हो वह प्यार तो तुम्हारे अन्दर ही है। वह ज्योति स्वरूप तो तुम स्वयं ही हो। ज्योति स्वरूप का मतलब है कि वह प्रकाश रूप में सबके अन्दर मौजूद है। इस हालत में आने के लिए क्या किया जाए। जब कोई तुम्हें ऐसा गुरू मिल जाए तो उसके आगे झुक जाना, उसके शरणागत हो जाना, उससे इतना प्रेम करना कि वह तुम्हारे प्रेम से अविभूत होकर पिघंल जाए। यह हालत ऐसे नहीं आयेगी। जब तक तुमने अपना अहंकार नहीं छोड़ा तब तक वह हालत नहीं आयेगी। क्योकि तुम भी वही हो।

'पहले दाता शिष्य भया तन मन अरपा शीश।
पाछे दाता गुरू भया नाम दिया बक्सीस।।

वो दाता ही तुम्हारे अन्दर है। मुझे जब यह अनुभव हो गया, अब मुझे न दौलत चाहिए, न सम्मान चाहिए, मैं तो अपने गुरू की आज्ञा के मुताबिक सच्चे प्रेम से आपको अपना अनुभव बता रहा हूं। एक बार वैसाखी पर महाराज जी ने (गुरू अपनी इच्छा किसी पर थोपता नहीं) मैं उनके पास बैठा था, उन्होंने इशारे के तौर पर मुझे कहा कि तू आजाद है। अर्जुन को भगवान कृष्ण ने वो उपदेश दिया कि खत्म कर दे अपने गुरू को भी, खत्म कर दे अपने पितामह को भी क्योंकि आत्मा तो अजर है, अमर है। यह सुनकर वह घबरा गया और कहने लगा महाराज मैं तो आपको मामूली इन्सान समझ रहा था, लेकिन अब समझ गया कि आप तो इतने जबरदस्त हो कि आपको आगे से भी नमस्कार है, पीछे से भी नमस्कार है, दायें से भी और बांये से भी नमस्कार है। कृपा करके मेरा मार्ग–दर्शन कीजिए। मुझे माफ कीजिए मैं आपको परमतत्व न मानकर मानव मान बैठा। संत मत की सारी तालीम गीता में दी गई है।

12वें अध्याय से लेकर 18वें अध्याय के अन्दर सारी तालीम दे दी कि यह सारा जगत् तेरे अन्दर है, मेरे अन्दर है और तुम्हारा जो परमधाम है यह तेरी जो भक्ति है तब सफल होगी जब तू उस परमधाम को पहुंच जायेगा। और वो परमधाम क्या है?

अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्तस्तमाहुः परमांगतिम्।
यं प्राप्य न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम। 8.21

और कबीर साहब इसी बात को इस प्रकार कहते हैं–

सखिया वा घर सबसे न्यारा, जहां पूरन पुरूष हमारा।
जहां नहीं चन्द्र सूर्य नहीं, बिन ज्योति उजियारा।।

तो मैं कैसे नहीं मानूं कि गीता सबसे पहली और आखिरी पुस्तक है राधास्वामी मत की। अर्जुन को श्रीकृष्ण ने सब कुछ बताया कि तू परमधाम भी जाएगा और आखिर में यह कहा–

'सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः। 18.66

अर्थात् सब बातो को छोड़ दे, केवल मेरी शरण में आ जा, मैं तुझे सब पापों से मुक्त कर दूंगा। यह कहने के बाद में यह भी कह दिया '

यथेच्छसि तथा कुरू' 18.63

'इति ते ज्ञानमाख्यातं गुह्याद्गुह्यतरं मया।
विमृश्यैतदशेषेण यथेच्छसि तथा कुरू।।'

अर्थात् इस रहस्य युक्त ज्ञान को सम्पूर्णता से अच्छी प्रकार विचार करके फिर तू जैसा चाहता है वैसे ही कर अर्थात् जैसी तेरी इच्छा हो वैसे कर। पहले उसका ब्रेनवास कर दिया और बाद में कह दिया जैसी तेरी इच्छा हो वैसे कर। एक तरकीब और भी बताई–

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरू।
मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे।। 18.65

जब कोई महाराज जी से अपनी इच्छा पूरी कराने के लिए कहता था तो महाराज जी कहते थे मेरे ऊपर ध्यान लगाया कर। जब किसी का काम नहीं बनता था तो कहते थे कि तेरा ध्यान लगा कि नहीं। जब वह कहता कि महाराज जी ध्यान तो नहीं लगा तो वो कहते थे कि फिर मैं क्या करूं? तो अर्जुन को भी कहा कि तू मेरा ध्यान लगा। अगर ध्यान नहीं लगता तो कुछ नहीं बनता।

'भक्ति बताई सबसे न्यारी, वेद कतेब न ताहि विचारी।'

सत्गुरू के पास रहने से उसकी रेडियेशन असर करती है, उसकी नहर लहर बन जाती है। मै सच कह रहा हूं मेरी बात को समझो। जो महाराज जी के पास रहकर कहते थे कि हमने वो पा लिया, वो पा लिया, लेकिन उन्होंने महाराज जी को नहीं समझा, जो बात महाराज जी ने कही उसे उन लोगों ने नहीं समझा। महाराज जी कहते थे कि उन्होंने अपने गुरू की कितनी सेवा की, चांदी का हुक्का बनवा कर दिया, जरी का सिंहासन बनवा कर दिया, मैं उनका पेशाब भी पी जाता था, लेकिन अब मुझे पता चला कि वो मेरी अज्ञान की भक्ति थी। लेकिन यह सब करने के बाद ही तो उनके अन्दर परमतत्व का अवतार जगाया गया। लोग कहते हैं कि हम तो उनके बहुत नजदीक थे, यह मानव दयाल कहां से आ गया?

उन्होंने जब यह बताया कि इस भक्ति का प्रयोग उन्होंने नहीं किया तो यदि पहली चीज तुमने नहीं की तो तुम कैसे बड़े ज्ञानी बन गये? मुझे दया आती है ऐसे लोगों पर। परमदयाल जी ने भक्ति की निन्दा नहीं की बल्कि उन्होंने कहा कि जो भक्ति परमतत्व की की जाती है वो करो। यदि भक्ति नहीं कर सकते तो जो महाराज जी कहते थे वही कृष्ण ने अर्जुन को कहा

'मद्याजी मां नमस्कुरू' मुझे नमस्कार कर दो, शराणागत हो जाओ। तुम दुनिया के साथ कैसा ही व्यवहार करो, निन्दा करो, चारसौबीसी करो, लेकिन गुरू के दरबार में आकर सच सच बता दो और आगे फिर वो गलती न करो तो तुम्हारी गलती माफ हो जायेगी, गुरू तुमको बचा लेगा।

जब मैं के0 एम0 कालेज उदयपुर में डीन थ तब मैंने छात्रों को कह रखा था कि अगर तुमसे कोई गलती हो जाए तो मुझे सच सच बता देना मैं तुम्हारा नुकसान नहीं होने दूंगा। मेरा एक चपरासी था वह कालेज के टाइम में कुछ धन्धा किया करता था इसलिए उसे कोई पसंद नहीं करता था। जब वह मेरे डिपार्टमेन्ट में ट्रांसफर हो कर आया तो मैंने कहा कि तू जो करना चाहता है कर लिया कर, जब जाना चाहे चला जाया कर लेकिन मुझे बता कर जाना, मैं संभाल लूंगा। अरे! गुरू भी तो यही कहता है कि तू मुझे अपनी कमियां बता दे मैं तुझे संभाल लूंगा। संतमत कहता है कि न कोई किसी का बेटा है न बाप है, न पति है न पत्नी है, सब राधास्वामी के अंश हैं और सभी रूपों में वह स्वयं ही लीला कर रहा है। वो तो ऐसी धार है, सब उस धार में ऐसे बंधें हैं कि वह सारे जगत को आनन्द दे रहा है।

अगर आप सच्चे दिल से गुरू को चाहते हो तो आपको उसकी आज्ञा मानने में कोई बहाना नहीं बनाना चाहिए कि मुझे घाटा चल रहा है, या पैसे की तंगी है, या कोई और कारण है जिससे गुरू की आज्ञा मानने में रूकावट आ रही है। जब मैं यहां आया तो एक मुझे एक सज्जन मिले वह पहले परम दयाल जी के पास भी आते थे और उन्हें कुछ न कुछ दान दिया करते थे। बाद में उन्होंने मानवता मंदिर में दान देना बंद कर दिया। जब वे मुझे मिले तो कहने लगे कि मेरी फैक्टरी बंद हो गई, घाटा चल रहा है। मैंने मन ही मन सोचा कि यह तो होना ही था क्योंकि उसका विश्वास जो टूट चुका था। गुरू पर विश्वास नहीं रखोगे तो घाटा तो होगा ही। परमदयाल जी कहीं चले थोड़े ही गये। यह क्या बात हुई कि परमदयाल जी को तो पैसा देते थे और अब बंद कर दिया।

हां एक और बात लोग कहते हैं कि हम महाराज जी के फोटो पर ध्यान लगाते हैं तो हमारा काम हो जाता है। काम तो हो जायेगा चाहे आप किसी के फोटो पर भी ध्यान लगाओ, किसी देवी–देवता के फोटो पर ध्यान लगाने से भी आपका काम हो जायेगा क्योंकि वह काम आपके मन की ताकत

के एकाग्र होने से होता है, लेकिन तुम उस जगह पर नहीं पंहुच सकते जिसके लिए यह मंदिर खोला गया है, तुम्हारी उनमुनी हालत नहीं आ सकती जब तक कि तुम जीवित गुरू के सामने नत्मस्तक नहीं हो जाते। यह बात मैं आपको आज बता रहा हूं कि यही बातें समझाने के लिए मैं आप सबसे प्रेम करता हूं। मेरा कोई दुश्मन नहीं है, मैं किसी से ईर्षा नहीं करता हूं। मैं सच्चे दिल से कह रहा हूं कोई मुझे कुछ कहे मैं सबका भला चाहता हूं।

आप सत्संग में न आने का बहाना बनाते हो। कृष्ण अर्जुन को कहते हैं कि अगर तू यह भी नहीं कर सकता, तो तुझे दूसरा रास्ता बताता हूं– 'मद्याजी माम् नमस्कुरू'। क्या कहा कृष्ण ने, यही सत्संग का राज है जिसके बाद तुम उस हालत में जा सकते हो जिसमें गुरू रहता है, क्या राज है–'मामेव नमस्कुरू' केवल मुझे नमस्कार कर दे, मेरी शरणागत हो जा। इसका मतलब है कि तू मनमत मत हो, गुरूमुख बन, अपने अहंकार को हटा दे बीच में से। यह अहंकार इतना सूक्ष्म है कि मैंने बड़े–बड़े सन्तों को अहंकार करते देखा है और दुनिया के सामने उनका अहंकार प्रकट भी हो जाता है। मैं कहता हूं कि यदि आपको अहंकार करना ही है तो इस बात का अहंकार करो कि मैं गुरू का हूं और गुरू मेरा है। इस बात का अहंकार करो कि परमदयाल जी मेरे गुरू हैं और जब मेरे गुरू ने मानव दयाल जी को चुना है तो अब मानव दयाल जी मेरे गुरू हैं। तुम अपनी बुद्धि क्यों लगाते हो, यही बात कृष्ण ने अर्जुन को समझाई।

एक सत्संगी यहां पर आया तो वह कह रहा था कि कुछ लोग आपके पीछे पार्टीबाजी करते हैं और जब सामने आते हैं तो महाराजजी महाराजजी कहते हैं। वे राजनीति करने वाले भी आ गये, नाम नहीं बताऊंगा। उस सत्संगी ने मेरे सामने ही उनसे पूछा कि क्या आप परम दयाज जी को मानते हो तो उन्होंने कहा कि हां मानते हैं। फिर उसने पूछा कि आप पीसे–मूगां जी को मानते हो और मानव दयाल जी को क्यों नहीं मानते तो वह बोले कि मेरी मर्जी। ठीक है जो तुम्हारी मर्जी है उसे मानो, जो तुम्हारी मर्जी की चीज नहीं है उसे फेंक दो। फिर क्या होगा? मैं कह रहा हूं कि तुम्हारी इच्छायें पूरी होती रहेंगी इसमें कोई शक नहीं है, लेकिन जब तुम परम दयाल जी की आज्ञा का पालन नहीं करोगे तो तुम्हारी वह अवस्था नहीं आ सकती जिसके लिए तुम्हारा जन्म हुआ है।

'मामेव नमस्कुरू' आज मैं परमदयाल जी महाराज परमगुरू सर्वाधार जो मेरे रग रग में समाया हुआ है, उनको पूर्ण शरणागत होकर श्रद्धांजली देता हूं। मैं उस परमतत्वाधार को श्रद्धांजली भी नहीं दे सकता, मैं तो ऐसा कहकर उनका कर्ज चुका रहा हूं। मैं तो उनका कर्ज भी नहीं चुका सकता, मैं तो सिर्फ उस जाते–पाक जो मेरी भी जाते–पाक है के सामने नत्मस्तक ही हो सकता हूं। कृष्ण भी अर्जुन को यही कहते हैं कि तू मुझे नमस्कार ही कर दे, फिर तू मुझमें ही समा जायेगा। एक सत्गुरू कृष्ण एक सत्संगी अर्जुन को कह रहे हैं जो पहले मनमुख था और अब गुरूमुख बना है। यह सब कहने के बाद उसे अपने बस में करने के बाद यह कह दिया कि जैसी तेरी मर्जी वैसा कर 'यथेच्छसि तथा कुरू'।

एक बार मैं महाराज जी से मिलने होशियारपुर गया। उस दिन मैं कुछ जल्दी में था। थोड़ी देर बाद मैंने महाराज जी से कहा कि महाराज जी मैं जाऊँ! उन्होंने कहा, जा! जब मैं चलने लगा, अभी थोड़ी ही दूर चला था तो फिर बुला लिया और खड़े होकर कहा कि तू दाता दयाल है। अरे! दाता दयाल का नाम उनकी जुबान पर हर समय रहता था क्योंकि उस परमतत्व का जो रूप उन्होंने दाता दयाल में देखा था वह हर समय उनके अंग–संग रहता था।

फिर अन्त में अर्जुन से श्रीकृष्ण पूछते हैं कि जो 18 सत्संग मैंने तुझे दिये, (6 चक्र शरीर के, 6 चक्र मन के और 6 चक्र आत्मा के) जो ज्ञान मैंने तुझे दिया, तेरी कुछ समझ में आया भी कि नहीं। अर्जुन भी चालाक था, उसने सोचा कि अगर कहता हूं कि समझ में आ गया तो ये समझेगें कि मैं अहंकारी हो गया हूं और यदि यह कहूं कि अभी समझ में नहीं आया तो ये समझेगें कि यह बड़ा बुद्धू है। तो उसने कहा–

'नष्टोमोहः स्मृतिर्लब्धा त्तत्प्रसादान्मयाच्युत।
स्थितोऽस्मि गतसन्देहः करिष्ये वचनं तव।। 18.73

क्या कहा? सत्गुरू के सत्संग में यदि आपका मोह नष्ट नहीं हुआ तो कोई लाभ नहीं हुआ। उसने कहा मेरा मोह नष्ट हो गया, मैं चेत गया हूं कि मैं कौन हूं। लेकिन यह चेतना जो है मेरी नहीं है, बल्कि आपकी कृपा से ही हुई है। पहले जो अच्युत कहा था वह मित्र के लिए कहा था और जो अच्युत शब्द का प्रयोग किया है उसका मतलब है जो कभी गिरे नहीं यानी

कि 'धुरपद धुरधाम निवासी है'। अब मैं खड़ा हो गया हूं अब कोई संदेह नहीं रहा लेकिन मनमानी नहीं करूंगा 'करष्यि वचनं तव'। मैं आपके आदेश का पालन करूंगा।

इसके बाद गीता समाप्त हो जाती है। अब संजय जो धष्तराष्ट्र को लाइव टेलीकास्ट सुना रहा है कहता है कि मैंने जो श्रीकृष्ण भगवान का सत्संग सुना तो मुझे लोमहर्ष होता है, मेरे रोंगटे खड़े हो रहे हैं और अन्त में कहता है कि जहां पर भी सत्गुरू होता है, विजय वहीं होती है। जहां ज्ञान देने वाला गुरू होगा वहां पर माया पर विजय होगी ही।

संतमत आगे चलेगा, सत्गुरू का सिक्षा आगे चलेगा। जब गुरू की सेवा हो जाए तब उसकी 'जुस्तजू क्या जो अपने रूबरू है'। पहले तो उसे तलाश करने में जद्दो–जहद करनी पड़ती है, जब वो मिल जाता है तो फिर 'यह जुस्तजू नहीं है तौहिने जूस्तजू है'। 'जब गुरू मिले फिर कहा कमाना,' जब वह मिल जाता है तो फिर कुछ करने धरने की जरूरत नहीं रहती। फिर तो यह हालत हो जाती है–

'मन मेरा निर्मल भया, जैसा गंगा नीर।
पाछे पाछे हरि फिरें कहत कबीर कबीर।'
'अंधे बने हैं आबिद, आंखें नहीं हैं खुलती।'

आबिद कहते हैं पुजारी को। उसे कोई मंदिर में ढूंढता है, कोई मस्जिद में कोई गुरूद्वारे में ढूंढता है कोई गिरजाघर में लेकिन जब तक अन्दर की आंख नहीं खुलती तब तक सब बेकार है। 'शिष्य निवे गुरू को जानत हैं सब कोय, गुरू निवे शिष्य को बिरला जाने कोय।' दातादयाल जी महाराज ने परमदयाल जी महाराज को दीक्षा देकर के गुरूपदवी देकर उनके चरणों में नमस्कार किया था। क्यों? क्योंकि वे जानते थे कि परमदयाल जी संतसत्गुरूवक्त है। इसलिए उन्होंने परमदयाल जी के लिए कहा–

'तू फकीर बन तू फकीर बन तू फकीर बन भाई।
मैं भी तरूं फकीर चरण लग, ऐ फकीर सुखदाई।।'

क्यों ऐसा कहा? क्योंकि वे स्वयं भी उसी अवस्था में पहुंचे हुए थे। इसलिए उन्हें परम दयाल जी में भी परमतत्व का रूप दिखाई दिया। उससे खाली कोई भी जगह नहीं है।

क्या खीलो खाल में है, क्या फरजी हाल में है।
जो है जुबां पै बैठा, क्या उसकी गुफ्तगु है।।

'वाद विवाद में राम नहीं है, राम न पूछा पेखी में अगर तुम बाल की खाल निकालोगे तो कुछ नहीं मिलेगा। इसलिए कहा है कि फर्जी हाल में कुछ नहीं रखा। जो हर वक्त जुबां पर बैठा है, जो हर वक्त आपके अन्दर बैठा है उसको ढूंढने की फिर कोई जुस्तजू नहीं है। पत्नी अपने पति का नाम नहीं लेन्दी और पति भी अपनी पत्नी का नाम नहीं लेन्दा। जब वो बात करते हैं तो कहते हैं 'सुनो जी', 'मैंने कहा जी', 'अजी सुनती हो', सुनो मोनू के पापा। एक स्त्री थी उसके पति का नाम 'ताराचन्द' था। एक त्यौहार पर उसे 'तारा' देखना था तो उसने अपनी सास से पूछा कि 'मुन्नी के पिता जी' कब निकलेगें? कहने का मतलब यह है कि जब आपस में प्रेम होता है तो उसका नाम नहीं लिया जाता क्योंकि उसके नाम लेने की लोड ही नहीं पैंदी। क्यों? क्योंकि वह तो हरवक्त जुबां पर बैठा है।

दिलदार और दिलबर, दिलकश है दिलरूबा है।
खुरशीद रू अगर है, वह मेरा माहरू है।।

आप जिसको प्यार करते हो वह आपका दिलबर है, आप उसकी इज्जत करो, चाहे उससे कोई रिश्ता मान लो, असली प्यार करने लायक तो सिर्फ तुम्हारा सत्गुरू है, बाकी जितने भी रिश्ते हैं सब मतलब के हैं सब मतलब के लिए प्यार करते हैं। मालिक भी दिलबर और दिलकश है, मासूक भी वही है आशिक भी वही है, प्रीतम भी वही है और प्रतिमा भी वही है। जो चीज आपके दिल के अन्दर कशिश पैदा करती है, वह वही है। आप समझते हो कि आप उसे प्यार करते हो, नहीं! वही तुमसे प्यार करवाता है, वही है सत्गुरू। तो जिस चीज के अन्दर तुम्हें आननद मिलता हे वो वही है। सब कुछ वही है, वही मेरा माहरू है, वही मेरा चाहने वाला है।

वह दिल में खुद है कायम, दिल घर है जिसका दायम।
दिल को संभल के देखा, वह दिल में मूबमू है।।

यह प्रेम की अवस्था है। जिसके दिल के अन्दर वह कायम है, जिसका दिल हमेशा उस मालिक का घर बना हुआ है, ऐसा व्यक्ति ही उसका अनुभव कर सकता है क्योंकि जब उसने उसको देखा तो पता चला कि वह तो उसके दिल में हू–बहू है।

राधास्वामी की मेहर से, कर शग्ल जिक्रे सुल्तां।
पहुंचेगा अपने मसकिन, जहां तेरी जुस्तजू है।।

'राधास्वामी की दया से कर शग्ल जिक्रे सुल्तां, पंहुचेगा अपने मस्किन जहां तेरी जुस्ततू है'। यहां जिक्रे सुल्ता का मतलब सुरत–शब्द–योग से है। सुरत–शब्द–योग का मतलब परमतत्व के साथ मिलकर एक हो जाने से है। यह उनमुनी हालत कहलाती है जिसे प्राप्त करने के लिए हमारा जन्म हुआ है।

कुछ लोग उस अवस्था को प्राप्त करने के लिए सन्यास लेते हैं, प्राणायाम करते हैं, सारी उर्म तपस्या करते हुए अपने शरीर को कष्ट देते हैं, लेकिन हासिल कुछ नहीं होता। जबकि केवल पांच मिनट के अन्दर आप उस अवस्था को प्राप्त कर सकते हो। सुरत–शब्द अभ्यास के द्वारा शब्द की धार को पकड़ा जाता है लेकिन जब तुम जीवित गुरू से प्यार करोगे, तब ही तुम्हारा काम बनेगा अन्यथा नहीं। यह मतलब है 'कर जिक्र सुल्तां' का। ऐसा कोई गुरूमुख ही कर सकता है, हरेक के बस की यह बात नहीं है।

'पहुंचेगा अपनी मसकिन, जहां तेरी जुस्तजू है।'

तुम वहां पहुंच जाओगे लेकिन गुरू के साथ प्रेम करने से। यह आज पूर्णमासी का सत्संग आपको दिया गया, ब्यास पूर्णिमा का सत्संग दिया गया। इस दिन गुरू के प्रति हम अपना समर्पण, आदर, सत्कार और श्रद्धा प्रकट करते हैं। मैंने आपको अपने अनुभव के आधार पर बता दिया कि

'कामी तरे क्रोधी तरे पापी तरे अनन्त।
आन उपासक कृत्घन तरे न नाम रटन्त।।

यदि गुरू के प्रति आप अपना अहसान प्रकट नहीं करते तो आप नहीं तर सकते। मैं आपको सद्भावना देता हूं इस ब्यासगुरूपूर्णिमा की कि आप सब तर जाओ और आप सब दिन प्रतिदिन उन्नति करते रहो।

जाको गुरू ने रंग दिया कभी न हो कुरंग।
दिन दिन वाणी उजली चढ़ो सवाया रंग।।

इसी के साथ मैं सत्संग समाप्त करता हूं।

सबको राधास्वामी!

MEDITATION IS MOST BEAUTIFUL UGLINESS

(AN EXCEPTIONAL AND LOVING EXPERIENCE BY GURNAR, U.S.A)

He was lying on his bed. He looked weak so his first word to me sounded like coming from somewhere else. "I knew you would come today as I have been awaiting you. Come to my place, stay with me, eat with me, sleep with me in the same room, and you will become like me."

It is needless to say that his words were indeed surprising to my western ears. And at the same time I knew that these words were not personally meant and that they could as well have been spoken to you, dear readers, if you had the good luck to be at this time at this place. Again this fragile voice reciting spontaneously flowing poems in extreme on conciousness. Devotees enter the room with food, Prasad. They offer it to Him with tremendous reverence. He eats lots of it with strange pleasure while his voice continues this wonderful song of words. But now these fragile melodies are rhythmically mixed with big burps from His stomach. But now it is all too late. In this intoxicated state in which I am in now I can't tell the difference between a burp or God's voice.

I have to continue the story about Manav Dayal. I went His Ashram in Hoshiarpur. And at that time I met so many beautiful beings. I could no longer just be a lucky projections of my own beauty: Shabdanand ji, Lahori Pandit ji, Sita and a lot of others just passer by.

A devotee from Hyderabad, Suresh Babu, arrived. He was of my age, late 30ies and a successful man having own company. He is also a passionate wild life protector and photographer. He told me many wonderful things. The story I want to narrate you now begins where the burp ends.

Suresh told me, "I was as you are now staying together with Manav Dayal Ji in private room. One night He came out of bathroom, coughing and almost no clothes on. My first thought was- "My dear God..... is this my guru. Is my guru that ugly. I cannot even look at this sight. why is He old? Why can I not have a young beautiful Master?"

Full of doubt I went into sleep. In the middle of the night I was awaken by something pulling my arm! I looked up and saw a divine being of light so radiant that I could not contain the beauty. It was such as intense beauty that I felt like pain. I cried in terror- Go away! I can't look at you. The being smiled teasingly and asked' "Do you find me beautiful now? Am I beautiful enough for you?" Yes! Yes! Yes! I cried.

Next morning Manav Dayal Ji asked me a question, "Do you find me beautiful?" GuruJi.....I replied, " You are too beautiful" and I fell at his foot in gratitude.

"Give Me All Your Money!"

Shortly after arriving in Manav Dayal Ashram there was a great gathering with thousands of people coming to celebrate Him. This occasion is called Guru Purnima. All over India people travel to visit their Guru to pay Him respect with flowers and love. This place was really crowded. Manav Dayal called me and said, " Give me all your money!"

What was this? Had I ended up once again in a spritual commercial trap?" In spite all doubts I gave Him my money belt. He took all the foreign money-dollars and traveller checks. And now to my horror He took my passport also. Then he handed back the money belt containing few Indian rupees. Trust me! He said with a smile.....enjoy.

One hour later when I was walking around in the Guru Purnima crowd my money belt was stolen. Then Shabdanand Ji came and told me, "Manav Dayal Ji calls you." And yes..... I had to laugh with a mischivious smile/ Manav Dayal Ji returned my passport and foreign money.

I put that all in my pocket and disappeared in the crowd of celebration. This was the last memory ever between me and Manav Dayal Ji. Manav Dayal / Dr. I.C. Sharma lived until recently with devotees in peaceful ashram in Punjab.

I stayed with Him for five months. He never asked me to do anything for Him. He just gave bliss, gave food and shelter.

He has now left his body but still He is with me.

By Gunnar, U.S.A.

(यह लेख आचार्य गुरू प्रसाद जी के सुपुत्र श्री अरूण शर्मा ने इंटरनेट से लेकर दिया है। प्रिय अरूण का यह सहयोग प्रंशशनीय है।)

इस पुस्तक के अन्य सभी सत्संग 'अछूते' रूप में आचार्यश्रेष्ठ श्री अजय कपिला जी, संतोषगढ़, हिमाचल प्रदेश द्वारा आडियो टेप के माध्यम से भेजे गये जिन्हें एक सत्संगी ने लिखकर यहां इस पुस्तक में प्रस्तुत किया है। हो सकता है इनमें कुछ अशुद्धियां रह गई हों। उन अशुद्धियों के लिए ट्रस्ट की ओर से हम माननीय सत्संगियों और श्री कपिला जी से क्षमा प्रार्थी हैं।

जनरल सेक्रेटरी, धुंरपदधाम, दुर्गापुर, पलवल, हरियाणा

एक अज्ञानी की प्रार्थना

उन महान आत्माओं के श्री चरणों में एक अज्ञानी जीव की तुच्छ प्रार्थना है कि जो महानुभव यह समझते हैं कि उन्हें परम दयाल जी से या मानव दयाल जी से सब कुछ मिल गया है और उन्हें अब किसी से कुछ लेने की जरूरत नहीं है क्योंकि वे गुरूपद को प्राप्त कर चुके हैं और वे भी जिन्होंने दया करके अन्य जिज्ञासुओं को परम दयाल जी या मानव दयाल जी के साथ जोड़ा और स्वयं सत्संग से अलग हो गये हैं, उन्होंने भी ऐसा करके गुरू का ही काम किया है, अतः उपरोक्त दोनों प्रकार के सत्गुरूओं से करबद्ध प्रार्थना है कि वे इस पुस्तक में दिये गये मानव दयाल जी महाराज के सत्संगों को बार–बार पढ़े और आत्म–निरीक्षण करें और स्वयं निर्णय लें कि क्या वर्तमान परिस्थिति में उन्हें संतसतगुरू वक्त की आवश्कता है? कहीं ऐसा न हो कि बहुत देर हो जाय। यह अज्ञानी तो पागल है इसकी बात का बुरा न मानना।

एक अज्ञानी जीव

साभार–आभार

गुरू की महिमा कौन गाये, उसका गाना है कठिन।
पहुंचने वाले कहां तुझ तक हैं, बानी और बचन।।
बुद्धि निर्णय कर नहीं सकती, न चित चिंतन के योग।
सोचने समझने की, शक्ति पाता है न मन।।
ज्ञानी अपनी युक्ति भूले, ध्यानी भूले ध्यान कर।
योगी थक कर हार बैठे, कर चुके जब सब जतन।।
तू नहीं काशी न मथुरा, द्वारका में तू नहीं।
ढूंढ़ने बन खंड़ी और, तपसी चले हैं सूना बन।।
मेरे हृदय में बसा रहता है, तू निस्संदेह आप।
राधास्वामी भेद बतलाया, लागी तुझसे लगन।।

परमसंत हुजूर मानव दयाल जी महाराज ने भी अपने गुरू परमसंत परमदयाल बाबा फकीर के प्रति 'आभार स्वरूप फकीर शताब्दी ग्रन्थ' छपवाया था। ऐसा ही एक प्रयास परमसंत हुजूर पुश्कर दयाल जी महाराज ने अपने इष्ट परम सन्त हुजूर शब्दानन्द जी महाराज के प्रति 'शब्दानन्द विषेशांक' छपवा कर किया है। यह प्रयास अपने आप में सोपान भी है और मंजिल भी है।

इस विषय में मैं दो शब्द अपने मालिके–कुल्ल के उस स्वरूप के बारे में कहना चाहता हूं जिनको 'मानवदयाल' नाम उनके गुरू बाबा फकीर ने दिया था, 'ईश्वरचन्द्र' उनके माता–पिता ने दिया था,, 'शर्मा' इस समाज ने दिया था तथा 'डाक्टर' की उपाधि इस संसार ने दी थी, जो स्वेच्छा से प्रकट हुये थे और स्वेच्छा से अप्रकट होकर अपना मिशन का झण्ड़ा जो उनको उनके गुरू ने उनको दिया था आगे सशक्त हाथों में थमाकर निज धाम को चले गये की याद में एक शताब्दी ग्रन्थ अगले वर्श 2016 के अंत तक छापने का संकल्प हुजूर पुष्करदयाल जी महाराज ने लिया है। है। अतः सभी श्रद्धालु एवं अश्रद्धालु बंधुओं से करबद्ध प्रार्थना है कि वे अपनी भावनाऐं कागज पर लिखकर श्री नरेष शर्मा जनरल सेक्रेटरी, धुरपद धाम, दुर्गापुर जिला पलवल को 30 जून 16 तक अवश्य भेज दें ताकि उनको उस ग्रन्थ में स्थान मिल सके। वैसे यह मानसिक विचार मूर्तरूप लेने लग गया है और दो सौ पन्नों के लगभग सामग्री छप भी चुकी है। अतः कृपया आप भी इस विषय में अपना पूरा सहयोग (मन, कर्म, वचन और धन–धान्य से) करें।

विनीत– आचार्य अजय कपिला, सन्तोशगढ़ हि.प्र.

आचार्य श्री आनन्द प्रकाश त्यागी जी के विचार परमसंत हुजूर मानव दयाल जी के प्रति

मानव दयाल दाता, श्री सतगुरू हमारे।
दुख सुख के जग भंवर में, तुम ही तो एक सहारे।।
अवतार प्रेम के तुम, करूणाके तुम हो सिन्धु।
तुम ज्ञान के हो सागर, दीनों के दीन बन्धु।।
सुरत के शब्द सिन्धु, बाबा फकीर प्यारे।। 1!!
सुन्दर लिबास तन का, सुन्दर है मोहनी मूरत।
वाणी मधुर तुम्हारी, प्यारी है सोहनी सूरत।।
दुखियों की तुम जरूरत, सब कष्ट तू निवारे।। 2।।
जब पहली बार दिल ने, दिलबर को अपने देखा।
अज्ञान मिट गया सब, मिट गई भरम की रेखा।।
जो रूप तेरा देखा, प्रारब्ध थे हमारे।। 3।।
व्ययापक है तेरी सत्ता, व्यापक तू जड़ चेचन में।
बनकर के मीत मन का, रहता हमारे मन में।।
पुष्कर दयाल तन में, तेरा रूप हम निहारें।। 4।।
मानव धर्म स्थापित, करने को आप आये।
श्री ईश्वर चन्द्र शर्मा, मानव दयाल कहलाये।।
'आनन्द' भाग्य सराये, देखकर तेरे नजारे।। 5।।
मानव दयाल दाता, श्री सतगुरू हमारे।
दुख सुख के जग भंवर में, तुम ही तो एक सहारे।।

आनन्द प्रकाश त्यागी, 16/1533,
वसुंधरा,गाजियाबाद यू0पी0

(एक शब्द जो कि हुजूर मानव दयाल जी महाराज के पिता जी पिताश्री श्री बलदेव कृष्ण जी बहादुर अक्सर सुबह शाम गाया करते थे जो कि हुजूर मानव दयाल जी महाराज को भी बहुत पसन्द था और वो अक्सर इसे गुन–गुनाया करते थे और कई बार उन्होंने इसे अपने सत्संगों में भी गाकर सुनाया था।)

शब्द

तू सुमिरन कर सीया राम नाम का।
पल बीते बीते जाते हैं, पल बीते बीते जाते हैं।।1।।
बाल अवस्था खेल गुजारी
युवक भयो युवति संग लाई।
वृद्ध भयो कुछ बन नहीं पाई
फिर पाछे क्यों पछताई।।2।। तू सुमिरन कर सीया राम
कौन तुम्हारा कुटुम्ब कबीला
यह तो सब मतलब का हीला।
सब जीते जी के नाते हैं
जो आते हैं वो जाते हैं।।3।। तू सुमिरन कर सीया राम
लाख चौरासी तू भुगत के आया
बड़े भाग से नर तन पाया।
फिर भी न तू कोई करे कमाई
युग बीते बीते जाते हैं।।4।। तू सुमिरन कर सीया राम

नोट–(सीया राम का संतमत के मुताबिक अर्थ है– सीया सुरत है अर्थात् सुरत का शब्द में लीन होना और राम को अर्थ है शब्दातीत अवस्था को प्राप्त करना। इसी को राधास्वामी अवस्था कहते हैं।)

प्रस्तुतकर्त्ता– आचार्य अजय कपिला, संतोषगढ़, हि0 प्र0

धुरपद धाम में आगामी सत्संग सूचना

तिथि एवं कार्य–क्रम

क्र.स.	दिनांक	समारोह विवरण	सतसंग का समय
1.	3 अक्टूबर 15 शनिवार	परम पूज्य शब्दानन्द जी महाराज का जन्म दिवस	प्रातः 10 से 1 बजे तक
2.	.20 अक्टूबर 15 मंगलवार	दशहरा सत्संग	सांय 7 से 9 बजे तक
3	.21 अक्टूबर 15 बुधवार	दशहरा सत्संग	प्रातः 10 से 1 बजे तक सांय 7 से 9 बजे तक
4.	22 अक्टूबर 15 ब्रहस्पतिवार	दशहरा सत्संग	प्रातः 10 से 1 बजे तक
5.	18 नवम्बर 15 बुधवार	परमपूज्य परमदयाल जी महाराज का जन्म दिवस	प्रातः 10 से 1 बजे तक
6.	25 दिसम्बर 15 शुक्रवार	शीत कालीन सत्संग प्रातः	10 से 1 बजे तक

स्वामित्व–अखण्ड मानवता मंदिर प्रतिष्ठान न्यास पलवल
हथीन रोड़, दुर्गापुर, जिला पलवल, हरियाणा 121102
संपादक मंडल– श्री प्रेम सुख, श्रीमति मंजू शर्मा, श्री विरेन्द्र
मुद्रक–पी0 एस0 प्रींटर्स बल्लभगढ़ जिला फरीदाबाद हरियाणा
प्रकाशक–जनरल सेक्रेटरी, अखण्ड मानवता मंदिर प्रतिष्ठान
न्यास पलवल हथीन रोड़, दुर्गापुर, जिला पलवल,
हरियाणा 121102 फोन न0 09991484747

ट्रस्ट अपने पूर्व व वर्तमान संत सत्गुरूओं के विचारों के प्रति समर्पित है। शेष लेखकों के विचार व्यक्तिगत हैं, उनसे सहमति अनिवार्य नहीं है।

Visit us on:
www.akhandmanavtadham.in